ओ३म्

परोपकारिणी

पाक्षिक परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५५ अंक - ३ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र फरवरी (प्रथम) २०१४

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

अध्यापक-गण

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर (२४ नवम्बर से १ दिसम्बर २०१३)

ऋषि उद्यान, अजमेर

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५५ अंक : ३
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: माघ शुक्ल, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी प्रथम २०१४

अनुक्रम

१. नववर्ष या मदिरा उत्सव	सम्पादकीय	०४
२. एकमेव दर्शनम्	स्वामी विष्वङ्	०६
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०९
४. संस्कृत भाषा का महत्त्व और.....	विरजानन्द दैवकरणि	१४
५. सियारामदास नैयायिक तिमिरभंजन	डॉ. वेदपाल	१६
६. राजनीति या ब्रह्मनीति	रामनिवास गुणग्राहक	१८
७. दु:ख-दु:ख का निवारण	राज कुकरेजा	२४
८. राष्ट्र निर्माता - सरदार पटेल		२८
९. पुस्तक-परिचय		३४
१०. जिज्ञासा समाधान-५६	आचार्य सोमदेव	३६
११. संस्था-समाचार		३९
१२. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

नववर्ष या मदिरा उत्सव

दूरदर्शन पर समाचार चल रहे थे। एक समाचार था, इस वर्ष दिल्ली, मुम्बई में नववर्ष के स्वागत में इकत्तीस दिसम्बर की रात्रि में दो सौ सत्तर करोड़ रुपये की शराब पी गई। कल्पना की जा सकती है कि सारे भारत में एक रात्रि में हजारों करोड़ रुपये शराब पर खर्च कर दिये गये। कौन कहता है कि भारत एक गरीब देश है। समाचार पत्रों में प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार जो शराब की बिक्री २०११ में ५०७०० करोड़ थी वह बढ़कर २०१५ में ११४० हजार करोड़ हो जायेगी। शराब की बिक्री प्रतिवर्ष ३० प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। भारत में तीन तरह की शराब बिकती है, प्रथम देशी मदिरा, दूसरी भारत में बनी विदेशी मदिरा, तीसरी विदेशों से आयातित मदिरा। मदिरा के उपयोग के अनुसार देश में ४८ प्रतिशत खपत देसी मदिरा की होती है। ४९ प्रतिशत खपत विदेशी मदिरा की है तथा तीन प्रतिशत खपत आयातित मदिरा की है। भारत के चार दक्षिणी राज्यों में कुल खपत का ४९ प्रतिशत उपयोग होता है। उत्तरी भारत में १२ प्रतिशत पश्चिमी भारत में ३० प्रतिशत और पूर्वी भारत में ९ प्रतिशत मदिरा का उपयोग होता है।

जब भारत स्वतन्त्र हुआ था तब मदिरा मुक्त भारत की कल्पना की गई थी। महात्मा गाँधी के स्वप्न में भारत में मदिरा के प्रयोग का प्रश्न ही कैसे उत्पन्न हो सकता है। इसलिए भारत सरकार में मद्य निषेध विभाग काम करता है। एक बार महादेवी वर्मा ने कहा था महात्मा गाँधी का इससे बड़ा उपहास क्या हो सकता है कि भारत की सरकार शराब बेचकर पैसा कमाती है और उस पैसे के अनुदान से मद्य निषेध विभाग चलाती है। मद्य निषेध के लिए महात्मा गाँधी ने प्रयत्न किया था परन्तु उनकी सरकार शराब को बढ़ावा देकर महात्मा गाँधी का गौरव बढ़ा रही है। शराब के समर्थकों का तर्क होता है कि भारत में बहुत पहले से शराब का सेवन किया जाता है, पुराने लोग इसे सोम कहते थे। ऋषि लोग यज्ञ करते हुए इसका सेवन करते थे। इससे यज्ञ कुण्ड में आहुतियाँ दी जाती थी। इसको बांटा जाता था और पीने पिलाने की परम्परा इस देश में बहुत प्राचीन काल से रही है। इसके लिए जितने भी तर्क दिये जाते हैं उन सबका उत्तर समय-समय पर दिया गया है। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त है कि सोम से बुद्धि बढ़ती है जबकि मद्य बुद्धि का लोप करता है अत: सोम का अर्थ शराब करना एक मूर्खता है। भारतीय या वैदिक संस्कृति में मद्यपान को एक पाप और अपराध माना गया है। अत: वैदिक काल में मद्यपान का विधान एक दुराग्रह मात्र है।

संस्कृति का अर्थ ही यह है जो आचार-विचार पूर्वजों ने अपने व्यवहार और अनुभव में प्राप्त कर उसकी परम्परा समाज में प्रचलित की और समाज को लाभान्वित किया। आज शराब पीना एक गौरव का प्रतीक बनता जा रहा है। शराब एक व्यापार है, व्यापारी अपने व्यापार को बढ़ाने का प्रयत्न करता है। आज व्यापार को बढ़ाने के लिए विज्ञापन किया जाता है। भारत में शराब के विज्ञापनों पर प्रतिबन्ध होने के बाद भी विज्ञापन देखने में आते हैं। सिनेमा में जितनी भी पार्टियाँ की जाती है उनमें शराब का विज्ञापन होता ही है। शराब की कम्पनियाँ अधिक से अधिक किशोर और युवा वर्ग को इसका व्यसनी बना रही हैं। जो बालक संस्कारी और नशों से दूर होता है वही बालक बाद में महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में जाकर नशों का आदी हो जाता है। उसे समझाया जाता है यह प्रगति का और आधुनिकता का लक्षण है, ऐसा नहीं करने वाला व्यक्ति समाज में पिछड़ा और गंवार समझा जाता है। उन परिस्थितियों में अपने से बड़ों को ऐसा करते हुए देखता है और प्रगतिशील बनने की उत्सुकता में शराब पीने का आदी हो जाता है। शराब पीने में केवल लड़के ही नहीं अपितु बड़े शहरों की लड़कियाँ भी पीछे नहीं है। इसका प्रभाव भी समाज में देखने में आ रहा है। जो लोग शराब पीने को प्रतिबन्धित करने का विरोध करते हैं उनका कहना है यह एक निजी अधिकार है, इस पर प्रतिबन्ध लगाना निजता के अधिकार का उल्लंघन है। हम भूल जाते हैं हमारी निजता की सीमा क्या है? निजता में यदि व्यक्ति की स्वयं की हानि भी करता है तो ऐसी निजता समाज को स्वीकार्य नहीं हो सकती। शराब से मनुष्य अपने स्वास्थ्य, धन, शक्ति, सामर्थ्य की ही हानि नहीं करता, उसके कारण परिवार और समाज की भी हानि होती है। प्रथम तो आर्थिक दृष्टि से परिवार को संकट झेलना पड़ता है। समाज में शराब को बढ़ावा देने वाले लोग मुफ्तखोर हैं, इन पूंजीपतियों के पास जनता सरकार को लूटकर असीमित धन आ जाता है, उसे बड़ी-बड़ी शराब की पार्टियाँ देने में कुछ भी हानि नहीं होती, वह जनता के और सरकार के पैसे की ही लूट करता है। दूसरे क्रम में नेता लोग आते हैं, इनके पास भी पूंजीपतियों से सरकारी भ्रष्टाचार से धन आता है, उसे लुटाने में या शराब पीने में उनको कोई घाटा नहीं होता। तीसरा वर्ग है प्रशासक वर्ग ये पटवारी क्लर्क से लेकर बड़े सरकारी अधिकारी, सचिव स्तर तक सब भ्रष्टाचार और रिश्वत के पैसे से शराब पीते हैं। चौथा व्यक्ति समाज में सरकार ने उत्पन्न किया है वह मजदूर जिसे बिना काम किये मजदूरी मिलती है और बिना पैसे दिये खाद्यान्न उपलब्ध हो जाता

है, उसका भी पैसा शराब पीने में जाता है। बचे जो लोग शराब पीते हैं वे अपने बाल बच्चों की रोटी बेचकर शराब पीते हैं। ऐसे लोग स्वयं तो कमाते नहीं परन्तु उनकी पत्नियाँ मेहनत मजदूरी करके, बर्तन मांज के जो पैसे लाती है, उनको भी ये शराबी उनसे छीन लेते हैं। ऐसी परिस्थिति में उनके बच्चे भोजन, वस्त्र, शिक्षा, औषध आदि सबसे वञ्चित होकर छोटी आयु में मजदूरी करने पर मजबूर हो जाते हैं या छोटे-मोटे अपराध करने में लग जाते हैं। बड़े किसानों को छोड़ दें तो छोटे किसान घरेलू आयोजनों में शराब पिला कर अपनी जमीन बेच देते हैं। किसी भी तरह से देखा जाय तो शराब अपव्यय है और निर्बलता, निर्धनता, दुराचार की जननी है।

आजकल महिलाओं के प्रति दुराचरण के जितने प्रकरण हमारे सामने आ रहे हैं, उन सब में बलात्कार का प्रमुख कारण शराब पीना है। मनुष्य शराब के नशे में होता है तब अपराध करता है अथवा अपराध करने की इच्छा रखता है तो वह शराब पी कर अपराध करता है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रतिदिन दस लाख महिलायें शराबी पुरुषों द्वारा हिंसा व अनाचार का शिकार होती हैं। जिनके साथ प्रतिदिन ही यह घटना हो वे इसकी शिकायत किसके पास करें। यदि वह पति, पिता, भाई हो तो किसके विरुद्ध शिकायत करने जायें ऐसी परिस्थिति में इस प्रकार की घटनायें कभी प्रकाश में नहीं आती। महिलाओं के साथ अनाचार करने वाले उन लड़कियों को किसी बहाने शराब पिलाने का प्रयास करते हैं, उनको नशे की दशा में लाकर उनसे दुराचार करते हैं। ऐसी परिस्थिति में शराब को पीना उसको निजता बताना, अपने उत्साह और उल्लास को प्रकट करने के लिए उसका उपयोग करने को उचित नहीं ठहराया जा सकता, अधिकार बताना तो बहुत दूर की बात है।

हमारी सरकारें शराब से प्राप्त होने वाले राजस्व को अपने लिए बहुत महत्त्वपूर्ण मानती हैं। बड़े राज्यों में गुजरात एक मात्र ऐसा प्रदेश है जिसमें पूर्ण शराब बन्दी है। जो इसका विरोध करते हैं उनका बड़ा तर्क यही है कि बन्द करने से चोरी छिपे अधिक पी जाती है। शराब की तस्करी होती है। इसमें रिश्वत ली दी जाती है। यह तर्क कुतर्क है। अधिक धन कमाने के लिए शराब बेचने का तर्क यदि मान्य किया जाय तो फिर शराब ही क्यों जुआघर और वेश्यावृत्ति को भी मान्य किया जाना उचित होगा, उसमें शराब से भी अधिक धन प्राप्त होता है। जो मानते हैं प्रतिबन्ध लगाने से चोरी बढ़ती है ऐसे मान्यता के लिए कोई भी कानून नियम बनाना निरर्थक हो जायेगा। संसार में ऐसा कोई नियम नहीं बना जिसे तोड़ा नहीं जाता परन्तु इसके लिए नियम नहीं समाप्त किये जाते अपितु कठोर दण्ड व जेल की व्यवस्था की जाती है। प्रतिबन्ध लगाने से सामान्य नागरिक को सबसे अधिक लाभ होता है वह तथाकथित बड़े लोगों के दिखावे में आने से बच जाता है और नियम तोड़ने का साहस भी नहीं करता। इसलिये यह कहना कि शराब पर से गुजरात में प्रतिबन्ध हटा लेना चाहिए यह विचार उचित नहीं है। इसके अतिरिक्त हरियाणा और आन्धप्रदेश ने शराबबन्दी लागू करके उस नियम को वापस ले लिया। परन्तु नागालैण्ड, मिजोरम में अभी शराब बन्दी लागू है अतः वनवासियों के बहाने से या राजस्व के बहाने से शराब का समर्थन करना समाज और देश के हित की अनदेखी करना होगा।

हम समझते हैं, शराब, जुआ, दुराचार की प्रवृत्तियाँ समाज में नहीं होनी चाहिए यह समाज का विचित्र सोच है, हम शराब पीने पर तो प्रतिबन्ध लगाने का विरोध करते हैं, परन्तु शराब पीकर होने वाले अपराधों को रोकना चाहते हैं। जुआ खेलने को वैधानिक बनाने की इच्छा रखते हैं परन्तु जुए से लूटने को, गरीब निर्धन होने को रोकना चाहते हैं। स्वतन्त्रता के नाम पर स्वेच्छाचार की छूट चाहते हैं और दुराचार, बलात्कार को रोकने की इच्छा रखते हैं। समाज की इन विषम परिस्थितियों को सुलझाने के उपायों पर हमारी सरकार युवा तथाकथित प्रगतिशीलता के नाम पर विचार करने के लिए ही तैयार नहीं है। इस मानसिकता का मूल कारण है इन व्यसनों से होने वाला आर्थिक लाभ। अच्छे संस्कार, अच्छी प्रवृत्तियाँ सीखने में तत्काल कोई सुख दिखाई नहीं देता, सिखाने वाले को किसी प्रकार का लाभ नहीं होता। यदि आज कोई विज्ञापन समाचार पत्रों में, दूरदर्शन में दें युवा शराब न पीये, जुआ न खेलें, बीड़ी न पीये, क्या इस विज्ञापन से विज्ञापन देने वाले को कोई लाभ मिल सकता है? इस विज्ञापन के देने में धन का व्यय तो होगा परन्तु इन विज्ञापनों से धन की प्राप्ति की आशा तो नहीं की जा सकती। इसके विपरीत एक बीड़ी या शराब का विज्ञापन देने वाले को विज्ञापन देने से व्यापार बढ़ता है, जितना धन विज्ञापन में लगाता है उससे अधिक धन बीड़ी, सिगरेट, शराब की बिक्री से प्राप्त होता है। व्यसनों के व्यापार में बेचने वाले को मनमाना धन मिलता है और खरीदने वाला किसी भी मूल्य पर उसे खरीदना चाहता है, व्यसनों के व्यापार में ग्राहक कभी उधार नहीं करता। इस आर्थिक लाभ छोड़ने को कोई तैयार नहीं है।

सरकार, समाज, माता-पिता, इस आर्थिक लाभ को छोड़ने का साहस नहीं कर पाते। हम स्वयं के बच्चों को व्यसनों से दूर रखने की इच्छा रखते हैं परन्तु इन्हीं वस्तुओं को बेचकर धन कमाने का मोह नहीं छोड़ पाते।

शेष भाग पृष्ठ संख्या १७ पर.....

आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण.....

एकमेव दर्शनम्

- स्वामी विष्वङ्

परम कारुणिक जगदीश्वर ने आत्म-कल्याण के लिए जगत् रचा है, यह सब जानते हैं। परमेश्वर ने मनुष्य के लिए वे सब साधन दिये हैं, जिनकी आवश्यकता मनुष्य को है। ऐसा कोई साधन नहीं है, जो मनुष्य को आवश्यकता हो और परमेश्वर ने नहीं बनाया हो। यह विचार ही नहीं होना चाहिए, क्योंकि परमेश्वर सर्वज्ञ है। परमेश्वर ने सर्वज्ञ होने के कारण उन सब साधनों का निर्माण किया है, जिनकी आवश्यकता मनुष्य को पूरी सृष्टि में कहीं भी, कभी भी पड़ सकती है। मनुष्य की अल्पज्ञता के कारण मनुष्य को यह ज्ञान नहीं हो पा रहा है कि कौनसा साधन कब आवश्यक है और कब नहीं? कुछ ऐसे भी साधन हैं, जिनकी निरन्तर और सतत आवश्यकता पड़ती है। ऐसे साधनों में 'मन' महत्त्वपूर्ण साधन है। जब परमात्मा ने सृष्टि बना कर मनुष्य को शरीर के साथ महतत्त्व, अहंकार आदि १८ तत्त्व दिये हैं, तब से लेकर आज तक यह 'मन' निरन्तर कार्य कर रहा है और जबतक सृष्टि रहेगी तब तक निरन्तर कार्य करता ही रहेगा। वर्तमान सृष्टि को लगभग दो अरब वर्ष होने जा रहे हैं, इतने लम्बे काल से मन आत्मा के साथ विद्यमान है। आत्मा मन से समस्त कार्यों को, निरन्तर निर्विघ्नता से करता जा रहा है। ऐसा समय नहीं आया, जो मन ने कार्य करना बन्द किया हो और ऐसा ही कार्य प्रलय होने तक निरन्तर करता ही रहेगा। आत्मा और मन का गहरा सम्बन्ध है और वह सम्बन्ध भी अति निकटता से है। इस कारण आत्मा और मन एक जैसे लगने लगे हैं अर्थात् आत्मा अलग एक स्वतन्त्र सत्तात्मक पदार्थ और मन एक अलग स्वतन्त्र सत्तात्मक पदार्थ न होकर दोनों एकात्म हो गये हों, मानो ऐसा ही प्रतीत होने लगा है। इसी कारण मनुष्य आत्मा को मन समझने लगता है और मन को आत्मा समझने लगता है, इसे इस रूप में भी कह सकते हैं कि आत्मा को जड़ और मन को चेतन समझने लगे हैं। भला ऐसा कैसा समझ सकते हैं- आत्मा कभी जड़ हो सकता है? आत्मा को हम कैसे जड़ समझेंगे? आत्मा तो चेतन है। हाँ आत्मा चेतन ही है, परन्तु आत्मा के साथ जड़वत् व्यवहार करने लगते हैं, क्योंकि मन को चेतन मानने लगे हैं। जब मन को चेतनवत् व्यवहार करने लगते हैं तब आत्मा अपने-आप जड़वत् हो जाता है।

लोक में सब जानते हैं कि मनुष्य यह कहता हुआ दिखाई देता है कि मेरा मन नहीं मानता, मेरा मन चला गया, मैंने नहीं किया मन ने किया है, मन स्वयं जा रहा है, इस प्रकार अनेकों उदाहरण हैं। इन उदाहरणों में मन को चेतन बनाया जा रहा है। जब मन को चेतन बना दिया है, तो आत्मा जड़वत् तो हो गया अर्थात् आत्मा कुछ नहीं कर सकता, मन ही सब कुछ कर सकता है। ऐसी स्थिति में मन जड़ नहीं रहा और आत्मा चेतन नहीं रहा। इसी कारण मनुष्य को भ्रान्ति हो रही है, मनुष्य जड़ को चेतन समझने लगा है और चेतन को जड़ समझने लगा है। यदि ऐसा ही होता रहे, तो मनुष्य अपने दुःखों को दूर करने में असमर्थ हो जायेगा। जब दुःखों को दूर करने में असमर्थ होगा तब तो मनुष्य अपने प्रयोजन को पूरा कैसे कर पायेगा? और परमेश्वर ने जिस उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस सृष्टि को उत्पन्न किया, वह उद्देश्य कैसे पूरा होगा? इसलिए हम सब को यह विचार करना चाहिए कि परमपिता परमेश्वर ने हम सब के कल्याण के लिए इस विशाल सृष्टि की रचना की है। क्या इस ईश्वरीय उपकार को धूमिल करके हम कृतघ्न बनें या कृतज्ञ बनें? इसका निर्णय हमें ही करना है। आज का मनुष्य उचित निर्णय करने में असमर्थ होता जा रहा है, क्योंकि मनुष्य ने स्वयं को नकार कर मन को सब कुछ मान लिया है। यद्यपि मन मनुष्य की उन्नति का और अवनति का कारण है, फिर भी केवल मन अपने-आप में कुछ भी करने में समर्थ नहीं। हाँ आत्मा के प्रयत्न से सब सम्भव है, परन्तु आत्मा के द्वारा संग्रहित ज्ञान पर आधारित रहेगा कि आत्मा उन्नति की ओर बढ़ रहा है या अवनति की ओर। उचित जानकारी अर्थात् यथार्थ-ज्ञान का प्रयोग करते हुए उन्नति की ओर ही बढ़ता जायेगा और यदि अनुचित जानकारी अर्थात् मिथ्या-ज्ञान का प्रयोग करते हुए तो अवनति की ओर ही बढ़ेगा। मनुष्य के पास उचित-ज्ञान और मिथ्या-ज्ञान, ये दोनों ही विद्यमान हैं। ज्ञान की प्रबलता के ऊपर निर्भर करता है कि कौनसा ज्ञान प्रबल है अर्थात् मिथ्या-ज्ञान की अधिकता है या उचित-ज्ञान की अधिकता है।

आज के मनुष्य ने तरक्की तो बहुत की, परन्तु वह तरक्की बाह्य रूप से अधिक है आन्तरिक तरक्की नगण्य है अर्थात् बहुत कम मात्रा में है। मनुष्य बाहरी रूप से कितना ही उन्नत दिखाई देता हो, वह उन्नति उन्नति नहीं मानी जायेगी, जब तक मनुष्य के आन्तरिक दुःख दूर नहीं होते। आज तो सब कुछ विपरीत हो रहा है, क्योंकि मनुष्य बाहर

से जितना-जितना उन्नत हो रहा है, उतना-उतना अन्दर से अवनत होता जा रहा है। मनुष्य अपना मूल्यांकन बाहर से करने लगा है और अन्दर से मूल्यांकन करना बन्द-सा कर दिया है। इसी कारण मनुष्य अधिक दु:खी दिखाई दे रहा है। इतना सब कुछ होने पर भी मनुष्य ने अन्दर से मूल्यांकन करना प्रारम्भ नहीं किया। जब तक मनुष्य जड़ वस्तु के ज्ञान को और चेतन वस्तु के ज्ञान को मिला कर एक ज्ञान के समान बनाता रहेगा तब तक दु:खों को दूर करने में असमर्थ रहेगा। जड़-ज्ञान, चेतन-ज्ञान, इन दोनों ज्ञानों को मिला कर एक ही ज्ञान के रूप में देखना 'वृत्तिसारूप्यम्' कहलाता है। वृत्ति का अभिप्राय ज्ञान है और सारूप्यम् का अभिप्राय समानता है। जड़ से सम्बन्धित वृत्ति और चेतन से सम्बन्धित वृत्ति, इन दोनों वृत्तियों को एक वृत्ति के रूप में समझना 'वृत्तिसारूप्यम्' है। उदाहरण के लिए दर्पण में शरीर को देख कर यह जाना जा रहा है कि मैं गोरा हूँ या काला हूँ। यहाँ पर दो पदार्थ हैं एक शरीर रूपी पदार्थ, जो जड़ वस्तु है और दूसरा आत्मा (मैं) रूपी पदार्थ, जो चेतन वस्तु है। मनुष्य दर्पण में शरीर रूपी जड़ पदार्थ को देख कर शरीर सम्बन्धि ज्ञान को मैं (आत्मा) रूपी पदार्थ में आरोपित कर रहा है। क्योंकि दो पदार्थ हैं, तो दोनों का ज्ञान भी अलग-अलग होना चाहिए परन्तु यहाँ पर एक ही ज्ञान हो रहा है। होना यह चाहिए कि मेरा शरीर गोरा या काला है और मैं (आत्मा) शरीर के गोरे या काले पन से अलग हूँ। ये दो प्रकार के ज्ञान हैं, परन्तु मनुष्य शरीर को और आत्मा को एक मान कर अलग-अलग ज्ञानों को एक बना कर एक जैसा ज्ञान उत्पन्न कर रहा है। इसी कारण इसे 'वृत्तिसारूप्यम्' कहा गया है।

जिस प्रकार मनुष्य शरीर को आत्मा समझ रहा है, उसी प्रकार संसार के समस्त पदार्थों को आत्मा समझ रहा होता है। इसी स्थिति को महर्षि वेद व्यास ने 'एकमेव दर्शनम्' कह कर स्पष्ट किया है अर्थात् मनुष्य को एक ही दर्शन (ज्ञान) होता है, अलग-अलग दर्शन (ज्ञान) होना चाहिए, किन्तु एक ही दर्शन हो रहा है। ऐसा दर्शन जिस किसी को होता है, वह व्यक्ति दु:खों से दूर नहीं हो पाता, बल्कि दु:ख सागर में डूबा हुआ रहता है। मनुष्य, शरीर को 'मैं' समझता तो है, परन्तु क्या संसार के समस्त जड़ वस्तुओं को भी 'मैं' के रूप में समझता है? हाँ संसार के सभी जड़ वस्तुओं को मैं के रूप में समझता है। अन्तर इतना है कि उनको व्यवहार काल में शरीर के समान व्यवहार नहीं करता अर्थात् जिस प्रकार शरीर को देख कर मैं गोरा हूँ या काला हूँ, ऐसा जो कथन करता है उसी प्रकार रूप, रस, गन्ध आदि अन्य पदार्थों को मैं रूप हूँ, मैं रस हूँ, मैं गन्ध हूँ इत्यादि नहीं कहता है। परन्तु रूप, रस, गन्ध आदि को देख कर जो ज्ञान होता है उस ज्ञान से चेतन व जड़ को अलग-अलग नहीं करता है। एक ही ज्ञान कर रहा है, जिसे 'एकमेव दर्शनम्' के रूप में महर्षि वेद व्यास ने स्पष्ट किया है और महर्षि पतञ्जलि ने 'वृत्तिसारूप्यम्' से स्पष्ट किया है। यद्यपि यहाँ पर किसी को यह बात अटपटी सी लग सकती है, परन्तु जब जड़ व चेतन को एक के रूप में अभेद कथन किया जाये और उस ज्ञान को एक ज्ञान के रूप में अनुभव किया जा रहा हो, तब तो जड़ को चेतन समझा जा रहा है। ऐसी स्थिति में जड़, जड़ में प्रवेश कर रहा है परन्तु उस जड़ को चेतन में प्रवेश कर रहा है, ऐसा समझना ही तो मैं गोरा या काला हूँ, है और ऐसा ही मैं रूप हूँ, मैं रस हूँ, मैं गन्ध हूँ भी है। इसीलिए महर्षि वेद व्यास ने कहा है 'एकमेव दर्शनम्' अर्थात् एक ही ज्ञान होता है। अलग-अलग ज्ञान नहीं हो रहे हैं। यह ही मिथ्या ज्ञान है, इसी मिथ्या ज्ञान को 'वृत्तिसारूप्यम्' वाला ज्ञान कहा गया है।

मनुष्य जब तक इस 'एकमेव दर्शनम्' की स्थिति में रह कर जीवन चलाता रहेगा तब तक दु:ख दूर नहीं होंगे और जब तक दु:ख दूर नहीं होंगे तब तक मनुष्य का प्रयोजन पूरा नहीं हो पायेगा। इसलिए जड़ (मन) को अलग और चेतन (आत्मा) को अलग समझने की चेष्टा करनी चाहिए। जड़-मन से सम्बन्धित जानकारी को और चेतन-आत्मा से सम्बन्धित जानकारी को अलग-अलग अनुभव करना होगा। अर्थात् मनुष्य जब कभी अपने शरीर को दर्पण में देखने लगे या केवल शरीर की अनुभूति करने लगे, तो 'मैं गोरा हूँ या काला हूँ' ऐसा अनुभव न करके मेरा शरीर गोरा या काला है, ऐसा अनुभव करें। यदि कोई यह कथन करे कि यह तो बोलने की भाषा है कि मैं गोरा या काला हूँ वास्तव में हम शरीर को ही कह रहे हैं कि शरीर गोरा या काला है। ऐसा कहने को सभी कहते हैं। परन्तु ऐसा कहकर भी वे शरीर को और आत्मा को अलग कर नहीं पाते हैं अर्थात् व्यवहार काल में शरीर को ही आत्मा मानते हैं। इसी कारण शरीर में किसी भी प्रकार की विकृति आ जाती है, तो उसे सहन नहीं कर पाते हैं, उन्हें अत्यधिक दु:ख होता है। वास्तव में ऐसे लोग यह अन्तर नहीं कर पाते हैं कि शरीर की विकृति से आत्मा में किसी भी प्रकार का अन्तर नहीं आता है। आत्मा विकृति रहित निर्विकार है। आत्मा की निर्विकारता का ज्ञान और जड़ शरीर की विकृति का ज्ञान अलग-अलग हैं, इसका बोध बार-बार करना पड़ता है। जिससे संस्कार भी बार-बार बनते जाये, जितने अधिक संस्कार बनेंगे उतना ही अधिक प्रभाव आत्मा पर पड़ता जायेगा। इसलिए अध्यात्म-मार्ग पर चलने वाले अध्यात्म-मार्गियों का बोल-चाल सांसारिक

बोल-चाल से हट कर ही होना चाहिए। जिससे साधक शीघ्रता से अपने उद्देश्य को पा सके। साधक को ऐसा कोई व्यवहार नहीं करना चाहिए जिस व्यवहार से उद्देश्य बाधित होता हो। साधक का मुख्य कर्त्तव्य है कि उद्देश्य को सम्मुख रखते हुए ही व्यवहार करना, न कि लोक में जैसा व्यवहार चलता है वैसा करना। लोक में उचित व्यवहार और अनुचित व्यवहार दोनों चलते हैं। अनुचित व्यवहार को तो किसी को भी (लौकिक व्यक्ति या आध्यात्मिक व्यक्ति) नहीं अपनाना चाहिए। कुछ व्यवहार अनुचित (असत्य) होते हुए भी लोक में स्वीकृत किये गये हैं जैसे- गाड़ी अच्छी चल रही है। यहाँ नियामक-चालक के कारण गाड़ी अच्छी चल रही है, परन्तु जड़ में चेतनत्व का आरोप करके कथन किया जाता है। यद्यपि लोक में यह स्वीकृत है, ऐसा ही मन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि मन चला जाता है, रुकता नहीं है इत्यादि। मन के सम्बन्ध में यह व्यवहार लोक में भले ही स्वीकृत हो परन्तु आध्यात्मिक-मार्ग में इसे स्वीकार नहीं करना चाहिए। क्योंकि आध्यात्मिक-साधक साधना के काल में मन को जड़ मान कर स्वत: न चलने वाला जानता हुआ मन को रोकने में समर्थ हो जाता है। जिससे साधना निर्विघ्न सम्पन्न हो सके।

साधना करने वाले प्रत्येक साधक को चाहिए कि वह 'एकमेव दर्शनम्' की स्थिति से ऊपर उठ कर जड़ वस्तु के दर्शन (ज्ञान) को अलग और चेतन वस्तु के दर्शन (ज्ञान) को अलग जान कर, मान कर और व्यवहार करके जीवन में आने वाले दु:खों को दूर करे। क्योंकि जीवन मिला ही दु:खों को दूर करने के लिए है। वह मनुष्य, मनुष्य इसलिए कहलाता है, क्योंकि वह दु:खी नहीं है। वह मनन करने वाला है, मनन का अभिप्राय विचार से है। इसलिए मनुष्य जड़ वस्तु का और चेतन वस्तु का विचार करके दोनों से सम्बन्धित ज्ञानों को अलग-अलग अनुभव करके 'एकमेव दर्शनम्' को बदल कर विविध-दर्शन (अलग-अलग दर्शन) करके दु:ख रहित जीवन बिताता हुआ मोक्ष रूपी उद्देश्य को पूर्ण कर लेता है। इसी को कृतकृत्यता कहते हैं।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

आवासिकं संस्कृत-भाषा-शिक्षण-प्रशिक्षण-शिविरम्

लोक-भाषा-प्रचार-समिति-राजस्थानशाखाया: परोपकारिणीसभायाश्च मिलितोद्यमेन अजमेरनगरे आवासिकं संस्कृतभाषाशिक्षण-प्रशिक्षण-शिविरम् आयोज्यते।

अवधि: - २४-०५-२०१४ त: ३१-०५-२०१३ (अष्ट दिनात्मकम्)
(२३-०५-२०१३ दिनांकस्य सायंकालपर्यन्तं शिविरस्थलम् ऋषि-उद्यानं प्राप्तव्यमेव भविष्यति।)

स्थानम् - ऋषि-उद्यानम्, पुष्करमार्ग:, अजमेर-३०५००१, दूरभाष:- ०१४५-२६२१२७०

योग्यता - संस्कृते रुचिमन्त: संस्कृत-आचार्या:, अध्यापका:, संस्कृतछात्रा:, उच्च माध्यमिक-वरिष्ठोपाध्याय-बी.ए./एम.ए./शास्त्रिकक्षा/आचार्यकक्षाछात्राश्च।

शुल्कम् - ३०० रुप्यकाणि।

व्यवस्था - एतद् शिविरम् आवासिकमस्ति, प्रशिक्षणार्थिनां भोजनावास व्यवस्था शिविरस्थाने भविष्यति
- बालिकानां, नारीणां कृते च पृथक् निवास व्यवस्था वर्त्तते, शिविरार्थिन: नित्योपयोगिनि वस्तूनि, शय्यावस्त्राणि लेखनसामग्री: च आनयेयु:।

स्वरूपम्- शिविरे अहोरात्रम् अखण्डं संस्कृतमयवातावरणम्,
- संस्कृतेन धाराप्रवाहं सम्भाषणस्य अभ्यास:,

विशेष - **संस्कृत-सम्भाषण सीखने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति या विद्यार्थी सुबह ९ से ११ बजे तक शिविर में भाग ले सकता है।**

डॉ. धर्मवीर:
अध्यक्ष:

डॉ. निरञ्जन साहु:
सचिव:
०९५१४७०९४९४, ९८२९१७६४६०

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

ईश्वर एक ही है:- यह एक आनन्ददायक बात है कि आर्यसमाज में फिर से शङ्का समाधान की परम्परा चल पड़ी है। परोपकारिणी सभा ने ऋषि मेला पर शङ्का समाधान की विशेष सभा आयोजित करके आर्यों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति को फिर से जगा दिया है। परोपकारी के पाठक भी अपनी शङ्कायें व प्रश्न निरन्तर भेजते रहते हैं। शिविरों में शङ्का समाधान का समय ऋषि उद्यान में रखा जाता है। रोजड़ में भी शङ्का समाधान पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यह आर्यसमाज के स्वास्थ्य का अच्छा लक्षण है। ऋषि मेला पर देश भर से आये परोपकारी पाठक मिलने पर बहुत अच्छे-अच्छे प्रश्न करते हैं। शङ्का करने वाले अपना तो ज्ञान बढ़ाते ही हैं, विद्वानों को इससे विशेष लाभ पहुँचता है।

ऋषि मेला से लौटने पर दिल्ली में डॉ. अशोक आर्य जी को किसी भाई ने प्रश्न भेजा कि ऋषि ने एक स्थान पर परमात्मा को ईश्वरों का ईश्वर लिखा है। इससे सिद्ध होता है कि ईश्वर अनेक हैं। ऋषि का ऐसा वचन हमें सत्यार्थप्रकाश में तो मिला नहीं परन्तु उपरोक्त शङ्का का भाव तो प्रश्न सुनते ही विनीत की समझ में आ गया। जैसे कर्त्ता अनेक हैं। सब जीव कुछ न कुछ करते ही हैं परन्तु सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर है। परमात्मा सबसे बड़ा कर्त्ता है। हम अपने घर के, परिवार के, पशुओं के स्वामी हैं परन्तु जगत् का स्वामी परमात्मा है ठीक इसी प्रकार ईश (स्वामी) भी कई हैं परमात्मा सारे जगत् के भीतर बाहर व्यापक होने से सबका ईश्वर या ईश्वरों का ईश्वर है। भक्तराज अमीचन्द के एक गीत में यही तो कहा गया है- ''राजों का महाराज तू''।

स्वामी दर्शनानन्द शताब्दी और स्वामी दर्शनानन्द जी का संन्यास:- सभा ने आर्य जगत् को स्वामी दर्शनानन्द निर्वाण शताब्दी मनाने की प्रेरणा दी। जहाँ-जहाँ सभा से सम्बन्धित विद्वान् गये वहाँ-वहाँ सोत्साह यह शताब्दी मनाई गई। आर्यसमाज मयूर विहार दिल्ली ने इसके लिए प्रशंसनीय पुरुषार्थ किया। प्रकाशकों में गोविन्दराम हासानन्द अग्रणी रहा। ऋषि मेला इसी शताब्दी के कारण ऐतिहासिक बन गया। स्वामी दर्शनानन्द जी की जीवनी की जितनी प्रतियाँ प्रकाशक महोदय अजमेर लाये वे सब की सब बिक गईं। माँग फिर भी बनी रही। एक आर्य पुरुष ने एक बार कहा था कि किसी सम्मेलन उत्सव की सफलता की कसौटी साहित्य बिक्री है। इस बार हमने सब पुस्तक विक्रेताओं से जा-जा कर पूछा, क्या साहित्य की खपत हुई है? सबने इस बार साहित्य बिक्री पर सन्तोष व्यक्त किया।

केरल से हमारे पुराने कृपालु श्री राजू पुँजार दो मास पूर्व अजमेर आ गये थे। वह एक सिद्धहस्त लेखक, ऊँचे विद्वान् व लोकप्रिय निष्काम धर्मोपदेशक हैं। जब गत बार डॉ. धर्मवीर जी, श्रीमती ज्योत्सना जी तथा इन पंक्तियों का लेखक केरल की प्रचार यात्रा पर गये थे तभी श्री राजू जी ने अजमेर में संन्यास लेने की हमें जानकारी दे दी थी। दूर दक्षिण के पहले आर्य विद्वान् व साहित्यकार आप हैं जिन्होंने संन्यास लेकर स्वामी दर्शनानन्द नाम पाया है। आपके साहित्य की केरल में बड़ी माँग रहती है। जो दानी आज तक हमें केरल में धर्मप्रचार के लिए दान देते रहे हैं, उनका दान फलीभूत हो गया। हमारा ४५ वर्ष का पुरुषार्थ सार्थक हो गया। अब केरल में आर्यवीर अपने तपोबल से साहित्य का प्रकाशन व पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित कर रहे हैं। ऋषि का वेद भाष्य भी छपने की तैयारी में है।

सभा मन्त्री जी ने बहुत सूझबूझ से स्वामी दर्शनानन्द शताब्दी की अध्यक्षता के लिये स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम का प्रस्ताव रखा। केरल से पहली बार इतनी बड़ी संख्या में आर्यवीर किसी आर्य सम्मेलन में भाग लेने आये। जब मान्य ओम मुनि जी ने इस सेवक को नये संन्यासी महात्मा जी का परिचय देने को कहा तब माननीय श्री स्वामी दर्शनानन्द जी हमारे गले लग गये। वह भाव विभोर हो गये। श्रद्धा व प्रेम से उनके नयनों से हर्षोल्लास से टप-टप अश्रु कण गिरने लगे। यह अश्रुकण नहीं थे। यह ऋषि भक्ति, वेद भक्ति व ऋषि मिशन से लगाव के अनमोल मोती थे। यह आर्यसमाज के इतिहास का नया स्वर्णिम अध्याय है।

पं. लेखराम वैदिक अभिलेखागार:- आर्यसमाज विषयक शोध करने वाले देशी-विदेशी रिसर्च स्कॉलरों तथा आर्य साहित्यकारों, विद्वानों को वाञ्छित सामग्री उपलब्ध करवाने के लिए परोपकारिणी सभा ने एक करणीय कार्य कर दिया है। सभा के विशाल पुस्तकालय को बड़े परिश्रम से सुव्यवस्थित कर दिया गया है। श्री मोहन जी जैसे अनुभव विद्वान् तथा बेटी अनुपमा जैसी सुयोग्या समाज सेविका दोनों ही समर्पित ऋषि भक्त शोध करने वालों की पुस्तकालय का लाभ उठाने में पूरी-पूरी सहायता कर सकते हैं। पुस्तक तस्करी करने वालों पर भी ये कड़ी दृष्टि रखते हैं। पुराने सब दस्तावेजों के संग्रह व सुरक्षा के लिए सभा अधिकारी व ट्रस्टी पूरा-पूरा ध्यान दे रहे हैं। कई विद्वानों का सहयोग व सेवायें सभा को प्राप्त हैं। अलभ्य व दुर्लभ दस्तावेज सभा में संग्रहीत होते जा रहे हैं।

सभा के मार्गदर्शन व संरक्षण में पं. लेखराम अभिलेखागार की स्थापना कर दी गई है। इस अभिलेखागार का ज्ञान भण्डार अत्यन्त दर्शनीय बन चुका है। ऊँची योग्यता के पाँच निष्ठावान् इस अभिलेखागार को मिलकर चला रहे हैं। सिद्धान्तनिष्ठ मिशनरी भावना के युवकों का यह दल आर्यसमाज की निराशा को छिन्न-भिन्न करके दिखायेगा। लीडरबाजी से दूर ये युवक निरन्तर अपना दायित्व निभा रहे हैं। अभिलेखागार का मुख्य केन्द्र अकोला में रहेगा।

सभा के संरक्षण में ऐसे कई मेधावी लगनशील युवक कुछ अन्य स्थानों पर भी इसी प्रकार के केन्द्र चला रहे हैं। हरियाणा में एक आर्यवीर 'पं. चमूपति वैदिक पुस्तकालय' की स्थापना करके आगे बढ़ रहा है। अभी इनके कार्य कलाप के बारे में इतना ही लिखना पर्याप्त है। फिर भी एक घटना दिये देते हैं। काशी शास्त्रार्थ को हम 'नवयुग की आहट' मानते हैं। इस पर बहुत कुछ लिखा गया है परन्तु काशी शास्त्रार्थ पर जितना 'महर्षि दयानन्द के सम्पूर्ण जीवन चरित्र' में लिखा मिलेगा उतना किसी भी अन्य ग्रन्थ में मिलना कठिन है। श्रद्धेय लक्ष्मण जी तथा इन पंक्तियों के लेखक ने इस पर अथक श्रम किया है।

ऋषि के शास्त्रार्थों का सम्पादन करते हुए हमने तत्कालीन स्रोतों तथा पत्रों की खोजकर के, मिलान करके ग्रन्थ में इन्हें दिया। काशी शास्त्रार्थ विषयक भी पुराने स्रोत खोज-खोज कर सामग्री दी तथापि 'आर्य दर्पण' का वह अङ्क हमारे हाथ न लगा जिसमें यह शास्त्रार्थ छपा था। मेरठ के कर्मवीर धर्मपाल जी वेदपथिक ने श्रम तो बहुत किया परन्तु..... हर्ष का विषय है कि पं. लेखराम वैदिक अभिलेखागार के आर्यवीरों का पुरुषार्थ रंग लाया है। हम शीघ्र यह सामग्री परोपकारी के माध्यम से आर्य जगत् को भेंट करेंगे। इसकी एक प्रति सभा के अलभ्य दस्तावेजों में शीघ्र ही सुरक्षित कर दी जावेगी।

युवक इस हेतु समय दें:- अजमेर में कई सुयोग्य आर्यवीर हैं, ऋषि उद्यान के गुरुकुल के युवा ब्रह्मचारी हैं, सहारनपुर जनपद के डॉ. धीरज कुमार आदि और भी कई योग्य युवक कार्यक्षेत्र में हैं। इन्हें वर्ष में दो-तीन बार सभा में पड़े विशेष अलभ्य स्रोतों पर समय लगाना चाहिये। हमने सभा को Agnihotri Demolished, श्रद्धाप्रकाश (पं. श्रद्धाराम जी की जीवनी) आदि कई एकदम लुप्त स्रोत सौंपे हैं। पं. शान्तिप्रकाश जी, स्वामी सूर्यानन्द जी तथा सोनीपत के पं. रामचन्द्र जी के ज्ञान भण्डार, भारत सुदशा प्रवर्त्तक तथा आर्य समाचार एवं आर्य दर्पण के सवा सौ वर्ष पुराने अंक सभा के अभिलेखागार में पहुँचाये जा चुके हैं। डॉ. दिनेश जी, डॉ. धर्मवीर जी, डॉ. वेदपाल जी तथा श्री मोहन जी के मार्गदर्शन में आर्य वीर इन दुर्लभ स्रोतों पर कार्य आरम्भ कर दें। आर्य युवक सम्मेलन, आर्य सम्मेलन, महिला सम्मेलन में भाषण दे देने से तो पं. गंगाप्रसाद द्वय को श्रद्धाञ्जलि नहीं दी जा सकती।

हिण्डौन में प्रभाकर जी ने स्वामी जगदीश्वरानन्द जी का पुस्तक भण्डार व्यवस्थित कर दिया है परन्तु उसका लाभ दीमक की बजाय आर्यवीर उठायेंगे तो विश्व-कल्याण होगा। निरन्तरता व सेवाभाव चाहिये।

महात्मा आनन्द स्वामी जन्म दिवस:- अजमेर में ऋषि मेला पर 'तड़प-झड़प' प्रेमियों ने अनेक प्रश्न पूछे। उत्तर प्रदेश से आये एक भाई ने महात्मा आनन्द स्वामी जी की जन्म तिथि तथा जन्म के वर्ष के बारे में एक प्रश्न कर दिया। उन्हीं से पता चला कि डी.ए.वी. के कुछ लोगों ने अब श्री महात्मा जी का जन्मोत्सव मनाने व मूर्तियाँ बनवाने, स्थापित करने की लहर-सी चलाई है। कुछ लेख भी छपे हैं, यह पता चला। महापुरुषों का पुण्य स्मरण अच्छी बात है परन्तु प्रश्न तो यह है कि यह जन्म तिथि व जन्म का वर्ष इन्हें बताया किसने? इनको यह जन्मोत्सव एकदम कैसे याद आ गया। महात्मा जी के लिये यह सब कुछ होने लगा है या पूनम सूरी जी को प्रसन्न करने के लिये।

जो प्रश्न पूछा गया उस पर हमारा निवेदन है कि इन लोगों की जानकारी का स्रोत रणवीर जी लिखित महात्मा जी की जीवनी। यह सर्वथा अप्रमाणिक पुस्तक है। रोचक तो है परन्तु तथ्यपूर्ण नहीं। बहुत-सी गप्पें गढ़-गढ़ कर इसमें परोसी गई हैं। **महात्मा जी को इसमें विदेशी आक्रमणकारियों का वंशज बताया गया है।** हमें यह मान्य नहीं है। हमने एक बार महात्मा जी से कहा था कि अच्छा होता यदि श्री रणवीर आपकी जीवनी न लिखते। इस पर महात्मा जी मुस्करा दिये। कोई हमारे जैसा आर्य यह कार्य इसे बढ़िया ढंग से कर सकता था।

महात्मा जी की अन्तिम वेला में लेखक श्री तिलकराज जी आर्य प्रकाशन के साथ श्री रणवीर से मिलने गया था। रणवीर सिद्धहस्त लेखक, कहानीकार व पत्रकार था। तब आपने हमसे महात्मा जी के आरम्भिक युग की पुस्तकें सतयुग की देवी तथा जेल की कहानी माँगी। यह भी कहा ऐसी-ऐसी पुरानी पुस्तकों की खोज व संग्रह की लगन आपको कैसे लगी? रणवीर जी द्वारा दी जन्म तिथि आदि की समीक्षा हम यहाँ नहीं करेंगे परन्तु अपना मत दिये देते हैं।

इस लेखक का मत है कि महात्मा आनन्द स्वामी जी के जन्म का वर्ष वही ठीक है जो हमारी मान्य माता मेला देवी जी (रणवीर की माता जी) ने बताया। हमने माता जी के भी कभी दर्शन किये थे। महात्मा जी सन् १८८८-८९

में ही पैदा हुए। यदि १८८३ में जन्मे होते तो इसका उल्लेख कभी तो करते। यह वर्ष ऋषि के बलिदान का वर्ष होने से कोई आर्य भूल ही नहीं सकता। अपनी आयु की चर्चा यदा-कदा लेखों में करने पर भी आनन्द स्वामी जी ने सन् १८८३ में अपने जन्म की बात कभी भी लिखी व कहीं नहीं।

१. हैदराबाद सत्याग्रह का आपको चित्र देखकर कोई भी पारखी तब उन्हें ५६ वर्ष का नहीं कह सकता।

२. इन पंक्तियों ने उनके संन्यास के कुछ समय पश्चात् उन्हें कादियाँ में देखा वह तब साठ वर्ष के आसपास ही लगते थे। उनकी आयु को बढ़ा-चढ़ा कर दिखाने में रणवीर का या इन जन्मोत्सव मनाने वालों का क्या प्रयोजन है, यह समझ में नहीं आता।

३. महाशय कृष्ण जी ने आनन्द स्वामी जी की संन्यास दीक्षा से लौटकर एक सुन्दर प्रेरणाप्रद सम्पादकीय लिखा था। उसमें आनन्द स्वामी जी को अपने से छोटा ही लिखा था। महाशय जी का जन्म सन् १८८१ में हुआ। सन् १८८३ में आनन्द स्वामी जी का जन्म होता तो महाशय जी कभी भी उन्हें छोटा न लिखते। एक-डेढ़ वर्ष का अन्तर कोई महत्त्व नहीं रखता। दोनों के हैदराबाद सत्याग्रह तथा हिन्दी सत्याग्रह के यह दर्शाते हैं कि दोनों में आयु का बहुत अन्तर था। यह अन्तर सात-आठ वर्ष से कम नहीं था।

अब एक बात बता कर इस प्रसंग को समाप्त करते हैं। महात्मा जी का सन् १९६३ में हैदराबाद में एक बहुत बड़ा ऑपरेशन हुआ था। तब उनके बेटों ने तथा भक्तों ने उनके इलाज पर बहुत व्यय किया। तब शोलापुर से प्रि. भगवान् जी के बड़े सुपुत्र श्री ओम प्रकाश जी (अमेरिका), श्री विनय (चण्डीगढ़) तथा यह लेखक उनके स्वास्थ्य का पता करने हैदराबाद गये। श्री पं. नरेन्द्र जी आदि ने उस समय महात्मा जी की बहुत सेवा की। खेद है कि डी.ए.वी. के किसी भी बड़े व्यक्ति ने हैदराबाद जाकर तब उनका पता न पूछा। प्रादेशिक सभा से श्रद्धेय पं. त्रिलोकचन्द्र जी का एक प्रेम भरा पत्र उन्हें अवश्य मिला था। अब उनके प्रति इन लोगों की इतनी भक्ति जागी है- इसका रहस्य यही जानें। आचार्य उदयवीर जी, श्रद्धेय मीमांसक जी, आनन्द स्वामी के गुरु पूज्य आत्मानन्द जी को भी ये लोग किसी बहाने याद कर लिया करें तो जनता इनकी श्रद्धा व भक्तिभाव पर मुग्ध ही होगी। आर्य शहीदों के पर्व मनाने की परम्परा का इन संस्थाओं में लोप आत्मघाती नीति है।

दो आर्य परिवारों में:- उदयपुर में आर्यसमाज पिछोली महर्षि दयानन्द मार्ग के प्रधान श्रीमाली जी ने लेखक को कहा कि भोजन से कुछ समय पहले हमारे घर आयें। धर्म चर्चा करेंगे। प्रधान जी का सारा परिवार बैठ गया। आपने सारे परिवार की शंकायें नोट कर रखी थीं। एक-एक का उत्तर देते हुए हमें बड़ा आनन्द हुआ। प्रश्न बहुत अच्छे थे। प्रधान जी के युवा पुत्र यशवन्त ने तो प्रश्न किये सो किये, प्रधान जी के छोटे से पौत्र के प्रश्न सुनकर मैं गद्गद् हो गया। छोटे से बालक ने वेद ज्ञान प्रभु ने कैसे दिया- इस प्रश्न का उत्तर पाकर पूरक प्रश्न करके अपने धर्मभाव व उत्तम संस्कारों का बहुत अच्छा परिचय दिया। हमने प्रधान जी से कहा, अब प्रश्न न पढ़िये, इसकी माता जी (प्रधान जी की उच्च शिक्षित पुत्रवधू को शंकायें करने दीजिये। भौतिकी शास्त्र में एम. एस. सी. उनकी पुत्रवधू से शंका समाधान करके अपने प्रवचन की समाप्ति पर हमने समाज में कहा, हम अपना यहाँ आना तब सफल मानेंगे जब प्रधान जी की पुत्रवधू एक दिन आर्यसमाज की प्रधाना चुनी जावेगी। परिवारों में वातावरण बनाने से ही बनता है। सारे परिवार ने अपनी-अपनी शंकायें लिखवाकर शंका समाधान किया, **यह हमारे लम्बे सार्वजनिक जीवन का पहला अनुभव है।** ऐसे ही दिल्ली में डॉ. अशोक आर्य जी के सुपुत्र प्रिय सुधाकर आर्य के गृह में एक दृश्य देखा। सुधाकर जी की दो पुत्रियाँ हैं। छोटी बेटी अदिति केवल दो वर्ष की है परन्तु उसकी बुद्धि व संस्कार सब मिलने वालों पर छाप छोड़ते हैं। सुधाकर अथवा अशोक जी के मुख से आसन या सन्ध्या शब्द सुनते ही दूर बैठी अदिति अपने आप आसन लाकर कहती है, आओ! सब सन्ध्या करो। इन दोनों घटनाओं पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। जो लोग भौतिकवाद, अविश्वास की आँधी से परिवार की टूटन को रोकना चाहते हैं, वे अपने परिवारों में अपनी दिनचर्या ऐसी बनावें कि बच्चे आपका अनुचरण करें। ऐसे ही परिवार स्वर्ग बनता है।

मालरे कोटला का मोर्चा:- किसी ने दिल्ली से मालेर कोटला के मोर्चा के बारे में एक-दो प्रश्नों के उत्तर माँगे हैं। पंजाब में धूरी के समीप मालेर कोटला एक छोटा-सा नगर है। कभी यह एक नवाब की छोटी-सी रियासत थी। हैदराबाद सत्याग्रह के पश्चात् स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने इस स्टेट पर चढ़ाई करके नवाब को ललकारा। स्वामी जी की हुँकार सुनकर ही नवाब चित हो गया। इतिहास में ऐसे संघर्ष को ही "Victory without a war" बिना युद्ध के विजय कहा जाता है।

बताया गया कि डॉ. अशोक आर्य जी ने स्वामी जी महाराज पर अपने एक लेख में यह लिखा है कि नवाब ने राज्य के सब सनातनी मन्दिरों पर ताले लगवा दिये। स्वामी जी ने ये ताले तुड़वाये या खुलवाये। प्रश्नकर्त्ता भाई ने पूछा है कि लौह पुरुष ग्रन्थ में हमने तो एक ही मन्दिर को ताले लगाने की कहानी लिखी है। तथ्य क्या है?

हमारा निवेदन है कि अशोक जी को अपनी जानकारी का स्रोत या प्रमाण लिखना चाहिये थे। उन्हें यह जानकारी किस ने दी। बिना मिलान के, जाँच-पड़ताल के, बिना कुछ लिखना अपना स्वभाव नहीं। रही लौह पुरुष में लिखे वृत्तान्त की, सो लेखक ने वहाँ सब प्रमाण साथ-साथ दिये जो संक्षेप से आगे फिर दिये देते हैं। सबसे पहले सन् १९६५ में हमारी पुस्तक वीर संन्यासी में मालेर कोटला के नवाब से टक्कर कहानी छपी थी। कभी किसी छोटे-बड़े वक्ता विद्वान् ने इस पर न भाषण दिया और न ही लेख लिखा।

एक बार आर्य प्रतिनिधि सभा के पुराने भजनोपदेशक पं. भक्तराम जी ने एक समाज में हमें कहा कि आपके काम की एक विशेष घटना आपको सुनाते हैं। तब आपने कहा, नवाब ने मालेर कोटला में सनातनियों के मन्दिर को ताला लगवा दिया। मन्दिर में पूजा के लिये किसी का जाना और कथा कीर्तन सब बन्द हो गया। मालेर कोटला के सनातन धर्म के एक अधिकारी पं. मोहनलाल जी प्रधान आर्यसमाज को लेकर सनातन धर्म सभा के नेता गोस्वामी गणेशदत्त जी से लाहौर में मिले फिर महाशय कृष्ण जी तथा दीवान बद्रीदास जी से सहायता माँगी। दोनों ने उनको यही कहा, गुरुदत्त भवन में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से मिलें। उनका निर्णय सभा का निर्णय माना जावेगा। महाशय जी ने यह भी कहा, दैनिक प्रताप आपको पूरा समर्थन देगा। स्वामी जी जब सनातन धर्म के मन्दिर की रक्षा के लिए मालेर कोटा गये तब श्री पं. भगतराम जी साथ थे। स्वामी जी ने नगर में एक भाषण में कहा, मन्दिर का ताला खुल जाना चाहिये नहीं तो नवाब यह समझ ले कि अब तक टक्कर सनातन धर्मी भाइयों से थी, अब आर्यसमाज से। कुछ ही घण्टों में मन्दिर के द्वार खुल गये। यह घटना हैदराबाद सत्याग्रह के थोड़ा समय बाद की है। 'आर्य गज़ट' उर्दू पत्र में एतद्विषयक हमारा लेख पढ़कर श्री पं. मोहनलाल जी लेखक को धूरी मिलने आ गये। हम तब वहाँ अध्यापक थे। पण्डित जी ने हमें विस्तार से सारी घटना सुनाई जिसका सार यह है:-

पुरान पत्रों को खंगालने से पं. मोहनलाल जी द्वारा दी गई जानकारी की पूरी-पूरी पुष्टि हो गई। सनातनी नेता पं. मदनलाल जी लाहौर जाकर सनातनी व आर्य नेताओं से मिले। गोस्वामी जी ने पं. मोहनलाल को भी सनातनी समझा उनके सामने भी यह कहा कि महाशय कृष्ण से भले ही मिलो परन्तु यदि वे सत्याग्रह करने की बात कहें तो मत मानना। पं. विष्णु दत्त को जब प्रतिनिधि बनाकर मालेर कोटला भेजा तब भी यही निर्देश दिया। पं. मदनलाल जी, पं. मोहनलाल जी को लेकर दीनानगर गये। सारी कहानी सुनाई। स्वामी जी ने कहा, ''मूर्त्ति पूजा तो आपने ही करनी है। आप को रोना चिल्लाना होगा फिर हम सहायता को पहुचेंगे।''

मालेर कोटला पहुँचने पर स्वामी जी के भाषण की व्यवस्था की गई। नवाब ने पं. मोहनलाल पर दबाव डाला कि उनका भाषण न करवाया जावे। पण्डित जी ने यह कलङ्क का टीका अपने पर लगने न दिया। कहा, यदि मैं उनका भाषण न करवाऊँ तो भी स्वामी जी व्याख्यान की सब व्यवस्था कर लेंगे। स्वामी जी की सिंह गर्जना से राजभवन हिल गये। मन्दिर के ताले उतर गये। नवाब के अधिकारियों के होश उड़ गये। नवाब समझदार निकला। रियासत भयङ्कर परिणामों को भुगतने से बच गई। सनातनी नेता तो संघर्ष से सुकचाते-घबराते रहे। आर्य संन्यासी आग में कूद पड़ा।

यह विवाद १९३५ से उग्र होता जा रहा था। राज्य में गोली भी चली। बब्बर अकाली आन्दोलन को कुचलने में भी आर्यसमाज ने नवाब का साथ नहीं दिया था। हिन्दू प्रजा पलायन करके धूरी आदि मण्डियों में निकल-निकल कर जा रही थी। सब जन वापस घरों को आ गये। रामायण कथा करवाकर मतांध अधिकारियों ने जो वैमनस्य फैलाया था उसमें कादियानी मिर्जाइयों का विशेष योगदान था। वीर संन्यासी इतिहास बना कर दिखा दिया:-

कौन है जो आर्यों के वलवले दबा सके।
कौन हमें छुरे तीर तोप से डरा सके।।

अन्त में पुन: यह विनती है कि लेखक वक्ता बिना जाँच, प्रमाण और मिलान के बोलने व लिखने से बचें।

लौह पुरुष सरदार पटेल की अन्तिम गर्जना से:- हमें वे दिन कभी नहीं भूल सकते जब सरदार पटेल ने अपने अन्तिम भाषण में महर्षि दयानन्द जी को श्रद्धाञ्जलि देते हुए ऐसे-ऐसे मार्मिक वचन बोले थे:-

"Swami Dayanand wiped off, "he said, the dirt and grime that had settled on the Hindu Dharma, He swept aside the cloud of superstition shrouding it and let in light."

अर्थात् स्वामी दयानन्द जी ने हिन्दू धर्म पर जमी हुई गन्दगी व मैल की परतों को धो डाला। उसने इस पर आच्छादित अन्धविश्वास के मेघों को छिन्न-भिन्न करके भीतर प्रकाश का प्रवेश होने दिया।

सुयोग्य आर्यवीर लक्ष्मण जी ने इस ऐतिहासिक भाषण की प्रति परोपकारिणी सभा को उपलब्ध करवा दी है। सभा इसको फोल्डर के रूप में सब भाषाओं में प्रचारित करने जा रही है। समाजें सहयोग को आगे आयें।

वेद सदन, अबोहर-१५२११६ (पंजाब)

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहे हैं, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला २०१४ दिल्ली में प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। **२.** आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। **३.** दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। **४.** पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। **५.** सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। **६.** सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा-१.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में होगी। लागत मूल्य ५०/- रुपये प्रति पुस्तक। **२.** ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग २०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ३०/- रुपये प्रति पुस्तक। **३.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी से इतर (अन्य) भाषियों के लिए सी.डी.या डी.वी.डी. के माध्यम से उपलब्ध करवाया जायेगा। इस डी.वी.डी. में लगभग १८ भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश होगा। लागत मूल्य लगभग २५/- होगा। **४.** संक्षिप्त ऋषि जीवन चरित्र अंग्रेजी में। लागत मूल्य १०/- रुपये।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को नि:शुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो। जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

संस्कृत भाषा का महत्त्व और आवश्यकता

- विरजानन्द दैवकरणि

सारे संसार के पाश्चात्य और उनके अनुयायी भारतीय इतिहासज्ञ और साहित्यकार एक मत से यह स्वीकार करते हैं कि संसार का प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद है और यह वेद संस्कृत भाषा में है। इससे यह तो सिद्ध ही है कि संसार की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत ही है। आज भी सारे भारत में जितने संस्कार, यज्ञ, धार्मिक कृत्य, पूजा-पाठ आदि होते हैं, वे सभी संस्कृत भाषा के द्वारा ही हो रहे हैं।

भारत का सारा प्राचीन साहित्य संस्कृत भाषा में है। जैसे चारों वेद, चार उपवेद, वेदांग, छह शास्त्र, उपनिषदें, ब्राह्मण ग्रन्थ, रामायण, महाभारत, कालिदास, भारवि, भास आदि कवियों का साहित्य, नाटक, भोजप्रबन्ध, विमानशास्त्र, कल्हण आदि की चारों राजतरंगिणी, ज्योतिष, अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, चरक, सुश्रुत, निघण्टु, निरुक्त, छन्दःशास्त्र, काव्यालंकार, अष्टाध्यायी, काशिका, महाभाष्य आदि।

इनसे कई गुना अधिक साहित्य तो मुस्लिम और अंग्रेजी राज्य में जलाकर नष्ट कर दिया गया। हूण आक्रमणकारियों ने भी पुस्तकालयों को जलाया था। संस्कृत के हजारों दुर्लभ ग्रन्थ भारत से बाहर विदेशों के पुस्तकालयों में भी संगृहीत हैं। इन सभी ग्रन्थों में भारत का प्राचीन ज्ञान-विज्ञान संस्कृत भाषा के द्वारा निहित है।

यदि प्राचीन लैटिन और ग्रीक साहित्य को इकट्ठा कर दिया जाये तो उससे कई गुना अधिक रचना प्राचीन संस्कृत साहित्य की है।

अक्षरों का उच्चारण कैसे किया जाता है, यह विज्ञान सबसे पहले संस्कृत भाषा के द्वारा ही विश्व में फैला है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जैसा शब्द बोला जाता है वैसा ही लिखा भी जा सकता है और जैसा लिखा गया है उसे वैसे ही बोल भी सकते हैं। यह विशेषता संसार की अन्य किसी लिपि और भाषा में नहीं मिलती। अंकों और दशमलव का आविष्कार सबसे पहले संस्कृत भाषा के द्वारा भारत में ही हुआ, इसीलिए अरबी में अंकों को हिन्दसा कहते हैं अर्थात् हिन्दुस्तान से आये हुये।

हम भारत से क्या सीखें- इस पुस्तक में मैक्समूलर ने लिखा है- भारतीय विद्वान् आकाश मण्डल तथा नक्षत्र मण्डल के ज्ञान में किसी दूसरे देश के ऋणी नहीं हैं। इस विज्ञान के मूल आविष्कारक भारतीय ही हैं।

डॉक्टर राबर्सन के अनुसार- ज्योतिष की १२ राशियों का ज्ञान सबसे पहले भारतीयों को ही हुआ था और वह ग्रन्थ संस्कृत में ही लिखा गया था। मार्गन कहता है- भारतीयों का संस्कृत में लिखा आकाश मण्डल का ज्ञान आज भी यूरोपियनों को आश्चर्यचकित कर देता है।

इसी भाँति पारा, गन्धक आदि रसायन का ज्ञान, भारद्वाज का विमान शास्त्र, भोज का समरांगण सूत्रधार आदि वायुयान विषयक साहित्य, तीनों प्रकार के गणित के ग्रन्थ शुल्वसूत्र आदि संस्कृत भाषा में हैं। अकेले विमानशास्त्र में विमान और विमान विषय के ९७ ग्रन्थों और विमान विशेषज्ञ ३६ आचार्यों का उल्लेख मिलता है। इस युग में विमान का आविष्कार १९०३ में सबके सामने आया है। परन्तु महर्षि दयानन्द ने वेद के आधार पर वायुयान बनाने की विधि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में सन् १८७६ में ही लिख दी थी।

पुराण, उपपुराण, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद् और चारों राजतरंगिणियों में प्राचीन इतिहास, वंशावलियों आदि का वर्णन संस्कृत भाषा में है। प्राचीन भारत के शिलालेख, ताम्रलेख, सिक्कों, मोहरों आदि के लेख प्रायशः संस्कृत भाषा में ही मिलते हैं।

नारद मुनि ने संस्कृत भाषा के जो ग्रन्थ और विद्यायें पढ़ी थी, उनमें चारों वेदों के अतिरिक्त अन्य विद्यायें भी थीं, जैसे- पित्र्य= वायुविज्ञान, राशि विद्या, दैवविद्या= भूकम्प आदि, निधिविद्या= भूगर्भीय धातु आदि का ज्ञान, वाकोवाक्य= तर्कशास्त्र, एकायन= दर्शनशास्त्र, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या= प्राणी-अप्राणी विद्या, नक्षत्रविद्या, सर्पदेवजनविद्या, चिकित्सा विद्या आदि।

संस्कृत में शून्य से लेकर दश शंख तक (१९ अंकों तक) संख्यायें मिलती हैं। इनको न जानकर अंग्रेजी पद्धति वाले आज भी अरब संख्या के स्थान पर १०० करोड़, दस हजार करोड़ आदि बोलते और लिखते हैं। ये करोड़ से आगे संख्या ही नहीं जानते।

आयुर्वेद के ऋषियों ने संस्कृत के माध्यम से शरीर और औषधियों के जो गुण, कर्म, स्वभाव और रोगों के उपचार आदि का वर्णन किया है वैसी खोज आज तक भी ऐलोपैथी पद्धति नहीं कर सकी है। शल्यक्रिया में सुश्रुत में वर्णित सूक्ष्म उपकरण के समान उपकरण आज भी नहीं बन पाये हैं।

मनुस्मृति, शुक्रनीति, नीतिशतक, पंचतन्त्र आदि राजधर्म और राजनीति के ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। पारस्कर, आश्वलायन, आपस्तम्ब, बौधायन, सांखायन आदि ऋषियों के गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र आदि ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। पाणिनि

मुनि और पतञ्जलि ऋषि के व्याकरण ग्रन्थ अष्टाध्यायी और महाभाष्य आदि ग्रन्थ संस्कृत की अमूल्य निधि हैं। सारे संसार को योग की शिक्षा देने वाले योगदर्शन आदि ग्रन्थ संस्कृत भाषा की ही देन है। कणादमुनि के वैशेषिक दर्शन में परमाणु विज्ञान का सूक्ष्म विवेचन है।

संस्कृत के इस महत्त्व को समाप्त करने के लिए राजा राममोहन राय से सहारा पाकर अंग्रेजी राज्य में लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति प्रचलित की गई। उसके परिणाम स्वरूप आज तक भी भारतीय प्रशासन में अंग्रेज और अंग्रेजी भक्त लोगों का ही साम्राज्य है। उस पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली के कारण भारतीय संस्कृति, संस्कृत और सभ्यता समाप्त होती जा रही है। इसके कुपरिणाम को देखकर महर्षि दयानन्द जी ने प्राचीन भारतीय आर्ष प्रणाली का पुनरुद्धार करके भारत की प्राचीन गरिमा की स्थापना की। उसी का परिणाम आज की गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली है। ये सभी गुरुकुल अपनी शक्ति के अनुसार संस्कृत भाषा की उन्नति में संलग्न हैं। सरकार जितना धन अन्य भाषाओं के प्रचार-प्रसार के लिए व्यय करती है, उसका शतांश भी संस्कृत भाषा के लिए नहीं कर रही। पुनरपि जनता के सहयोग से कुछ सज्जन इस प्राचीन धरोहर की सुरक्षा और वृद्धि में लगे हुए हैं।

स्कूल, कॉलेजों में पढ़ने वाले छात्र प्राय: करके बसों को जलाते, बिना टिकट यात्रा करना चाहते, सड़कें बन्द करते, हुल्लड़बाजी करते और रैगिंग करते हैं और हड़ताल तथा आन्दोलन करके राष्ट्रीय सम्पत्ति की हानि करते रहते हैं। नैतिक और धार्मिक शिक्षा का मूल संस्कृत भाषा ही है। इसके अभाव में पाश्चात्य शिक्षा के द्वारा पढ़ने वाले छात्रों में प्राय: करके दिनचर्या और खानपान की कोई मर्यादा नहीं है, वे धूम्रपान, स्मैक, शराब जैसे दुर्व्यसनों में फंसे हुए हैं। संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों ने अथवा संस्कृत के किसी संस्थान ने कभी भी ऐसे राष्ट्रहानि और व्यक्तिगत हानि के कार्य नहीं किये।

इसलिए भारत, भारतीयता, संस्कृत और संस्कृति की रक्षा के लिए दिन-रात लगे हुए संस्कृत शिक्षण संस्थानों का पूरा सहयोग करना मानवमात्र का कर्त्तव्य है।

इसके अभाव में भारतीय संस्कृति, सभ्यता और भारत की पीढ़ी को पाश्चात्य शिक्षा पद्धति ने ऐसा विकृत कर दिया है कि आये दिन लूट, हिंसा, दुराचार और अनैतिकता की सूचनाओं से अखबार भरे रहते हैं। यदि देश को उन्नत, सभ्य, सुशिक्षित और विश्वगुरु का स्थान दिलाना है तो संस्कृत भाषा की शरण में आना ही होगा। अन्यथा परिवारों का विघटन, वृद्धों की सेवा का अभाव, परिश्रम से जी चुराना, अन्य की सम्पत्ति को लूट कर अपना पेट भरना, धन के लिये हत्या करना और बलात्कार करने जैसी अमानवीय भावनायें प्रबल होकर देश को रसातल में ले जाने के प्रयत्न में लगी हुई हैं।

- गुरुकुल झज्जर, हरियाणा

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

सियारामदास नैयायिक तिमिरभंजन

- डॉ. वेदपाल

धार्मिक जगत् में सैद्धान्तिक विषयों को लेकर मतवैभिन्न्य होना एक सामान्य सी बात है। विद्वज्जन ऐसे बिन्दुओं पर प्रतिपक्षी मत के निरसनपूर्वक स्वमतस्थापन भी करते रहे हैं, किन्तु स्वमत स्थापन से अधिक प्रतिपक्षी पर व्यक्तिगत लांछन लगाने की प्रवृत्ति न तो साहित्यिक जगत् और न ही सभ्य समाज की दृष्टि से मान्य हो सकती है।

आचार्य सियारामदास नैयायिक, पीठाध्यक्ष, जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान) ने फेसबुक पर- महर्षि दयानन्द सरस्वती के 'वेद संज्ञा' विषयक मन्तव्य पर अभद्र-शिष्टजनगर्हित टिप्पणियाँ दी हैं। वैचारिक असहमति प्रकट करने की शिष्ट परम्परा पर नैयायिक जी ने अपनी कलुषित मानसिकता से कालिमा पोतने का यत्न किया है। प्रमुख दार्शनिक आचार्य के नाम पर स्थापित संस्कृत विश्वविद्यालय की गरिमा को तार-तार करने में कोई कसर नहीं रखी है। इनकी भाषा के नमूने हैं-

१. उन्मत्तोऽस्ति दयानन्द.....
२. दयानन्दियो मूलमित्ति छलमयी तुम्हारी बनी हुयी।
   अपने मूलपुरुष को देखो, सनातनी से ठनी हुयी।।
३. किन्तु छली दयानन्द तो समाज की आँख में धूल
   झोंककर एक दुराग्रही समाज खड़ा करना चाहते थे...।
४. मुन्नी बदनाम हुयी दयानन्द तेरे लिए....। आदि-आदि

नैयायिक जी प्रत्येक पृष्ठ के अन्त में ''जय वैदिक सनातन धर्म, जय श्रीराम'' का उद्घोष करते हैं। यदि नैयायिक जी को सनातन धर्म और श्रीराम की जय की इतनी चिन्ता है तो यह बताएँ कि- आपके अभिमत सनातन धर्म तथा श्रीराम के जीवन को लेकर विभिन्न मतावलम्बियों तथा अनेक लेखकों ने जो लिखा (कीचड़ उछाली) है, उसके विरुद्ध आपकी लेखनी द्वारा क्या किसी आक्षेप का उत्तर दिया गया? यदि नहीं तो क्यों? यदि आपकी दृष्टि में वह सब आक्षेप नहीं आए हैं तो लिखिए आपको उन ग्रन्थों, लेखों तथा पत्रिकाओं के नाम बताए जाएँ। तब आपका पाण्डित्य देखा जाएगा। आप उन वेद विरोधियों, हिन्दू-धर्म विरोधियों और श्रीराम व कृष्ण के जीवन पर कीचड़ उछालने वालों के विरुद्ध इसी शैली (जिसमें आप महर्षि को सम्बोधित कर रहे हैं।) में अधिक नहीं, केवल इतने ही पृष्ठ लिखकर दिखाईयेगा, तब आपका पौरुष व पाण्डित्य दोनों देखे जाएंगे। हम जानते हैं कि आप में वह सामर्थ्य नहीं है, जो हिन्दू धर्म पर आक्षेप करने वालों के विरुद्ध लिखने के लिए अपेक्षित है।

महर्षि के निष्कलंक जीवन पर आपने जो धूलि प्रक्षेप किया है वह सूर्य की ओर फैंकी गई धूलि के समान है जो फैंकने वाले के मुख पर ही आती है। कोलकाता विश्वविद्यालय के सीनेट हाल में आप जैसे सैंकड़ों पण्डित एकत्र होकर आप ही अपनी पीठ थपथपा कर सन्तोष का अनुभव पहले भी कर चुके हैं। (यहाँ यह स्मरणीय है कि उस सभा में महर्षि को निमन्त्रित करने का साहस भी वह पण्डित मण्डली न कर सकी थी।) अब एक सौ तीस वर्ष पश्चात् आप द्वारा अपना विजय घोष उससे अलग नहीं है।

जिस मन्तव्य-नियोग को लेकर आप कीचड़ उछाल रहे हैं, उसके लिए व्यास जी (आपके अनुसार महाभारत तथा अष्टादशपुराणकर्त्ता) से पूछ लीजिए कि उनका अभिमत क्या है? धृतराष्ट्र-पाण्डु और विदुर के जन्म का मूल बताईये? जिसके लिए आप ऋषि को कोस रहे हैं- वही है या कुछ अन्य है? इस बिन्दु पर अपना मन्तव्य स्पष्ट करें और बताएँ कि- व्यास जी के प्रति आपका दृष्टिकोण क्या है?

यहाँ हम उन पाठकों, जिन्हें महाभारत तथा स्मृति ग्रन्थों को मूलरूप में देखने का अवसर नहीं मिला है की जानकारी के लिए स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि नियोग व्यवस्था (जिसे आज के शब्दों में कुछ परिवर्तनपूर्वक सरोगेसी समझा जा सकता है।) आपद्धर्म (सामान्य नियम न होकर केवल विशेष परिस्थिति में ही परिवारीजनों की सहमति से वंश को चलाने के लिए) के रूप में मान्य रही है। केवल हिन्दू धर्म या भारत ही नहीं, अपितु अन्य धर्म-मत में भी यह व्यवस्था रही है। पुराना धर्मशास्त्र इसका साक्षी है।

महर्षि जिसे आपद्धर्म मानकर चर्चा करते हैं, उसे आप अपनी चर्चा के केन्द्र में रखकर हाय-तौबा मचा रहे हैं वह भी अपने मान्य ग्रन्थों को देखे बिना। निम्न प्रमाणों पर अपना अभिमत प्रकट करें-

विचित्रवीर्य की मृत्यु पर सन्तान की कामना से सत्यवती (विचित्रवीर्य की माता) ने पहले भीष्म से अपने भाई की पत्नी से नियोग के लिए कहा था, किन्तु भीष्म के मना कर देने पर व्यास जी से नियोग के लिए आग्रह किया, तब धृतराष्ट्र-पाण्डु-विदुर का जन्म हुआ। द्रष्टव्य- महाभारत आदिपर्व अध्याय १०५-

यवीयसस्तव भ्रातुर्भार्ये सुरसुतोपमे।। -३७

रूपयौवनसम्पन्ने पुत्रकामे च धर्मतः।
तयोरुत्पादयापत्यं समर्थो ह्यसि पुत्रक।।

-३८ अ. १०६ भी द्रष्टव्य है।

यही नहीं पाण्डु (जो स्वयं नियोगज था) के असमर्थ होने तथा सन्तान की कामना से पाण्डु के कहने पर कुन्ती ने नियोग व्यवस्था से ही युधिष्ठिर-भीम-अर्जुन को जन्म दिया। इसी नियोग व्यवस्था से माद्री ने नकुल-सहदेव को जन्म दिया।

नैयायिक जी! आपको मुन्नी के बदनाम होने की चिन्ता बहुत सता रही है। अब बताईये कि- मुन्नी किसके लिए बदनाम हुई? अपनी उसी लेखनी से एक बार नाम लिखकर बताईयेगा।

अब नियोग विधायक अपने मान्य ग्रन्थों (जिन्हें आपने देखा नहीं अथवा शतुर्मुर्ग की तरह आँखें बन्द कर लीं) के प्रमाण देखिए-

१. उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं....संबभूथ।।

ऋ. १०.१८.८, अथर्व. १८.३.२

इस ऋग्वेदीय मन्त्र का विनियोग ऋग्विधान में देखिए-

भ्रातुर्भार्यामपुत्रस्य सन्तानार्थं मृते पतौ।
देवरोऽन्वारुरुक्षन्तिमुदीर्ष्वेति निवर्तयेत्।।
ऋतुकाले तु सम्प्राप्ते घृताभ्युक्तेऽथ वाग्यतः।
एकमुत्पादयेत्पुत्रं न द्वितीयं कथंचन।।

उपर्युद्धृत शौलकीय व्यवस्था पर अपना अभिमत प्रकट कीजिए और स्पष्ट कहिये कि आप शौनक के लिए भी वही शब्द प्रयोग करेंगे जो महर्षि के लिए किये हैं। यदि नहीं तो क्यों? इसी के साथ मनु को भी देखिए-

२. देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्यङ् नियुक्तया।
प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये।।

अ. ९, श्लोक २५

बौधायन धर्मसूत्र के निम्न सन्दर्भ को पहले देखिए और तब कहिये-

३. संवत्सरं प्रेतपत्नी मधुमांसमद्यलवणानि
वर्जयेदधः शयीत।
षण्मासानिति मौद्गल्यः।
अत ऊर्ध्वं गुरुभिरनुमता देवराज्जनयेत् पुत्रमपुत्रा।

प्रश्न २, खं. ४, सूत्र ७-९

हमने दिङ् मात्र निर्देश करते हुए महाभारत के अतिरिक्त शौनकीय ऋग्विधान, मनुस्मृति तथा बौधायन धर्मसूत्र को उद्धृत किया है। आपके लेख से प्रतीत होता है कि या तो आपने धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों को देखा नहीं अथवा आप समझे बैठे हैं कि-

'मुखमस्यास्तीति वक्तव्यं दशहस्ता हरीतकी' के अनुसार जो मन में आया लिख मारा, कौन शास्त्र देख रहा है। यहाँ हमने वसिष्ठ, याज्ञवल्क्य, गौतम तथा विष्णु धर्म सूत्र प्रभृति ग्रन्थों के उद्धरण जान पूछकर नहीं दिए हैं। आप इन सब को देखकर बताईये कि इन शास्त्रों के प्रति आपकी मान्यता क्या है? साथ ही आपको याद दिलाना आवश्यक है कि विश्वरूपाचार्य (आपद्धर्म के रूप में नियोग के समर्थक) को पढ़कर कहिये की आप इन सभी को उन्हीं शब्दों से सम्बोधित करेंगे (जो आपने महर्षि के लिए लिखे हैं।) या नहीं। यदि नहीं तो क्यों?

नैयायिक जी! यह भी बताईये कि धर्मशास्त्रकार 'क्षेत्रज' के सम्बन्ध में जो मत रखते हैं आप उसे किस दृष्टि से देखते हैं?

उपर्युद्धृत समग्र सन्दर्भ देखकर बताईये 'नकेल किसकी नाक में लगी?' और मुन्नी किसके लिए बदनाम हुई?

- ३०/२, सै.-४, जागृति विहार, मेरठ-२५०००४
चलभाष- ०९८३७३७७९३८

पृष्ठ संख्या ५ का शेष भाग.....

इस व्यापार में लाभ की सीमा बड़ी होने से बड़े-बड़े व्यापार व उद्योग इस कार्य में लगे हैं। वे केवल विज्ञापन या मनोवैज्ञानिक प्रकार से ही युवा वर्ग को पथभ्रष्ट नहीं कर रहे हैं अपितु छल और बल से काम लेने में भी इन्हें संकोच नहीं होता। शराब का व्यापारी गाँव के शराब के ठेके को चलाने के लिए गुण्डों की सहायता लेता है और शराब के ठेके का विरोध करने वालों को पिटवाता है फिर बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ इस कार्य में पीछे कैसे रहेंगी। वे भी धन कमाने के लिए धन व्यय करती हैं, वह विज्ञापन हो या मारपीट हो इसलिए आज समाज में इन बुराइयों पर अंकुश लगाने में विरोध करने में कठिनाई आती हैं। परन्तु जनता के स्वास्थ्य की, उसके धन की, विचारों की सुरक्षा करना उन्हें प्रोत्साहित करना, समाज और देश का भला चहाने वालों का कर्त्तव्य है। अतः किसी भी परिस्थिति में इन बुराइयों के विरोध को छोड़ना नहीं चाहिए, अच्छाई के परिणाम दूरगामी और स्थिर होते हैं। उनका प्रभाव आत्मा पर पड़ता है। अतः गीता में कहा गया है-

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम्।
परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम्।।

- धर्मवीर

राजनीति या ब्रह्मनीति

- रामनिवास गुणग्राहक

महर्षि देव दयानन्द अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में एक गौरवपूर्ण घोषणा करते हैं कि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर महाभारत के युद्ध पर्यन्त इस सम्पूर्ण भूमण्डल पर आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य रहा है। महाभारत युद्ध के लगभग एक सहस्र वर्ष पूर्व हमारे विद्या-व्यवहार में गिरावट आने लगी, परिणामतः कौरव-पाण्डवों के गृह क्लेश ने विश्वयुद्ध का रूप धारण करके न केवल आर्यावर्त्त को बल्कि इस पूरी पृथ्वी के जनजीवन को एक ऐसा धक्का दिया कि ५००० वर्षों के बाद भी मानव के हृदय में वेद विद्या जड़ें नहीं जमा पा रही। ऋषि ने इस विषय में ठीक ही आंकलन किया था कि एक बार जो जाति पतन के गड्ढे में गिर जाती है, उसका पुनः सम्भलना बड़ा ही दुष्कर कार्य होता है। कितना दुष्कर होता है, इसका आभास हमें इसी बात से हो जाना चाहिए कि अपना सारा जीवन लगातार ऋषि दयानन्द जी महाराज ने हमें ज्ञान-विज्ञान से परिपूर्ण जो कल्याण का पथ दिखाया, अपनी पूरी शक्ति और सामर्थ्य लगाकर आज तक भी हम स्वयं को उस पथ का पथिक नहीं बना सके। इसी बात को हम शब्द बदलकर कहना चाहें तो कह सकते हैं कि अभी हम आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य के सामान्य नागरिक तक होने की पात्रता नहीं रखते! एक बात हम आर्य कहलाने वालों को अपने हृदय पटल पर गहरे और मोटे अक्षरों में अंकित कर लेनी चाहिए कि सद्गुणों, सद्भावनाओं और सत्कर्मों को स्वीकारे बिना सुख, शान्ति और समृद्धि के स्वप्न देखना भी बौद्धिक दिवालियापन ही माना जाता है। अवगुणों, एक दूसरे के प्रति दुर्भावनाओं और दुष्कर्मों के रहते संसार में कभी किसी ने उत्तम सुख, सच्ची शान्ति और अचल समृद्धि को प्राप्त किया हो, ऐसा इतिहास कहीं नहीं मिलता।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का एक महत्त्वाकाँक्षी स्वप्न था कि भारत विश्वगुरु, सोने की चिड़िया तथा चक्रवर्ती सम्राट जैसे गौरवपूर्ण विशेषणों को पुनः प्राप्त कर सके। इसके लिए वेद-विद्या के प्रचार-प्रसार को ऋषिवर मूल आधार मानते थे। जब तक यह राष्ट्र वेद-विद्या का धनी था, वैदिक सदाचार और जीवनमूल्य जब तक हमारे व्यवहार में रचते-बसते थे, तब तक हम आर्य नाम से पुकारे जाते थे और विश्व समुदाय हमारा अनुगामी होने से आनन्द मनाता था। आर्यसमाज की स्थापना के पीछे भी ऋषि का यही उद्देश्य झलकता है। जब महर्षि वेद को सब सत्य विद्याओं को पुस्तक कहकर वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम् धर्म घोषित करते हैं, सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में तत्पर रहने की प्रबल प्रेरणा करते हुए संसार का उपकार करना अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य घोषित करते हैं तो स्पष्टतः चक्रवर्ती सम्राट् बनकर ही यह उद्देश्य प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान काल का अनुभव बताता है कि सत्ता के गलियारों में प्रवेश करके प्रभाव पैदा किये बिना आर्यसमाज अपने संस्थापक द्वारा प्रदत्त (संसार की शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति के) लक्ष्य या मुख्य उद्देश्य को पाने में समर्थ नहीं हो सकता। आर्यसमाज की मुख्यधारा के चिन्तक-विचारक इस दिशा में चिन्तन-मनन करते हुए जब-तब अपने मनोभावों को प्रकट करते रहते हैं। कुछ अति उत्साही या यूँ कहें कि इस विषय की जटिलताओं, गूढ़ताओं और उत्थान-पतन के संवेदनशील तत्त्वों का सटीक ज्ञान न रखते हुए अपनी राजनैतिक आकांक्षाओं के उभार का आनन्द लूटने को व्याकुल होकर आर्यसमाज के संसाधनों के बल पर अपनी उन आकांक्षाओं को पूरा करना चाहते हैं, वे कई बार अपने राजनैतिक कौशल का प्रदर्शन करते हुए ऐसे निर्णायक क्षण भी ला देते हैं। ऐसे निर्णायक क्षण कतिपय चतुर सुजनों व उनके समान गुणशील वालों के लिए भले ही उत्साहवर्धक हों, लेकिन आर्यसमाज के व्यापक उद्देश्यों एवं मूल प्राणदायक प्रवृत्ति (वेद-विद्या का प्रचार-प्रसार) के लिए प्राण घातक सिद्ध होंगे।

आर्यसमाज आज अपने कर्णधार कहे जाने वालों की छोटी सोच से उत्पन्न अन्तर्कलह से जूझ रहा है। ऐसे में वेद विद्या प्रेमी एक भी आर्य विद्वान् आर्यसमाज के राजनीति में पदार्पण के बारे में सोच भी नहीं सकता। मेरे घर की दुर्दशा दूर किये बिना मैं समाज को सुधारने व राष्ट्र को सम्भालने की बात करूँ तो लोग मेरा उपहास उड़ाने वालों के समर्थन में ताली बजाएँगे ही। आर्यसमाज को राजनीति में ले जाने की योजना पर काम करने वाले एक बार सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास को मनोयोग से पढ़ें और बतायें कि महर्षि मनु के प्रमाण देकर ऋषि दयानन्द ने राजा, राज्याधिकारियों व कर्मचारियों आदि के जैसे गुण, कर्म, स्वभाव, योग्यता व प्रतिभा का उल्लेख किया है, क्या वैसी योग्यता से युक्त व्यक्तित्त्व आर्यसमाज में कहीं कोई दिखता है? अगर नहीं, तो क्या हम राजनीति में जाकर महर्षि के सपनों को ऐसे ही साकार करेंगे जैसे आर्यसमाज

सम्बन्धी सपनों को कर रहे हैं? समझदारों के लिए संकेत ही पर्याप्त है। आर्यसमाज किसी भी दिशा और दशा में यह भरोसा दिलाता नहीं दिख रहा कि वह राजनीति में आकर कोई बहुत बड़ा काम कर दिखाएगा। आज की राजनीति इतनी कलंकित हो चुकी है कि जिसके पास चाणक्य व दयानन्द जैसी पावन प्रज्ञा, प्रचण्ड संकल्पशक्ति और त्यागमयी जीवन शैली नहीं होगी, वह कुछ ही दिनों में इस कालिमा का एक हिस्सा बनकर रह जाएगा।

प्रश्न खड़ा होता है कि ऐसे में आर्यसमाज राष्ट्रीय स्तर पर अपनी भूमिका किस रूप में निभाये? इस सम्बन्ध में अगर सीधी सटीक बात कही जाए तो वह यह है कि राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी प्रकार की भूमिका निभाने से पहले हमें ऐसे त्यागी, तपस्वी और प्रखर प्रतिभा के धनी आर्य विद्वानों को प्रोत्साहित करने का अभियान चलाना चाहिए। अभी तो हमारी स्थिति यह है कि एक सच्चा, सिद्धान्तनिष्ठ आर्य अपने आर्यसमाज व प्रतिनिधि सभाओं का पदाधिकारी बनने का सपना तक नहीं देख सकता। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी प्रकार की भूमिका निभाने के लिए वे ही व्यक्ति सिर उठाएँगे जो कि आज विभिन्न पदों पर कुण्डली मार बैठे हुए हैं। इसलिए पहली आवश्यकता यह है कि हम आर्यसमाज से '**अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानामवमानना:.....**' की स्थिति को उलट कर पूजनीयों की पूजा का वातावरण बनाएँ। आज हम स्वार्थ जनित सम्बन्धों की पूजा करते हैं, सदाचार व सद्गुणों की नहीं। इस प्रवृत्ति के चलते हमारा घर (आर्यसमाज) दबंगों का अखाड़ा बन चुका है तो राष्ट्रीय स्तर पर किसी शुभ परिणाम की सम्भावना कोई बुद्धिमान् व्यक्ति नहीं कर सकता।

राष्ट्रीय स्तर पर कोई सार्थक भूमिका निभाने के लिए आर्यसमाज को राजनीति की नहीं, ब्रह्मनीति की आवश्यकता है। राजनीति का स्वभाव और स्वरूप कभी सुधारवादी रहा ही नहीं। राजनीति ने कभी जनहित में कोई बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कदम उठाया हो, ऐसा प्राप्त इतिहास में नहीं मिलता। वैदिक युग में राजनीति पर अंकुश लगाने के लिए ब्रह्मनीति सबसे अधिक कारगर उपाय था। प्रत्येक राजा के निकट सर्वाधिकार प्राप्त एक राजर्षि हुआ करता था। जबतक राजनीति ब्रह्मनीति के संचालक राजर्षियों (महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र आदि) के नियन्त्रण में रही, तब तक रावण जैसे प्रबल शत्रु को श्रीराम-लक्ष्मण ने हनुमान, सुग्रीव आदि उपकृत सहयोगियों के सहारे मार डाला। इधर महाभारत की बात करें तो महात्मा विदुर, महर्षि वेद व्यास और पितामह भीष्म जैसे तत्त्वदर्शी '**ऊर्ध्व बाहुर्विरौम्येष न च कश्चित् शृणोति मे**' जैसी पुकार लगाते रहे, लेकिन निरंकुश राजनीति ने ब्रह्मनीति की बात अनसुनी कर दी तो श्री कृष्ण-अर्जुन की युगलबन्दी ने अजेय माने जाने वाले महारथियों को धराशायी कर दिया। राजनीति और ब्रह्मनीति के परस्पर सम्बन्ध पर अथर्ववेद का 'ब्रह्मगौ' (ब्रह्मगवी) सूक्त बहुत अच्छा प्रकाश डालता है। इस सूक्त में बड़े विस्तार के साथ यह बताया गया है कि सत्ता के मद में आकर कोई शासक राष्ट्रहितैषी ब्राह्मण की सत्य वाणी का तिरस्कार कर देता है तो उसका राज्य, उसकी सत्ता छिन्न-भिन्न होकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। ब्रह्मनीति ही राष्ट्र की सर्वोपरि शक्ति होती है, ऋग्वेद में कहा है- 'हे राजन्! जो तपस्वी, पुरुषार्थी वक्ता जन, उत्तम रूप वाले, मंगल जिनके आचरण, युद्ध-विद्या में कुशल आर्यजन आपको जिस-जिस का उपदेश करें, उस-उस को अप्रमत्त (सावधान) होते हुए सदा आचरण करो' (७.१८.७)। अन्यत्र कहा है- 'हे राजन्! जो वेदार्थवेत्ता (ऋषि) हैं, पदार्थों के जानने वाले योगी हैं, विद्यारत श्रेष्ठ बुद्धिमान् जन, जो प्रजा का कल्याण चाहते हैं, उनसे मित्रता रखो' (७.२२.९)। ये सभी वेदादेश राजा को प्रेरणा करते हैं कि वह प्रजा का हित करने वाले धर्मात्मा, विद्वान् (ब्राह्मण) की शिक्षाओं, उपदेशों के अनुकूल राजव्यवस्था करे। उनके प्रतिकूल चलना, उनकी उपेक्षा करना या उन्हें प्रताड़ित करना राजा को राज सहित नष्ट कर डालने वाला घोर अपराध है।

- स्मृति भवन, जोधपुर (राज.)

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (द्वितीय स्तर)

दिनांक १५ से २२ जून २०१४

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आंकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण–पत्र भी दिये जायेंगे। इस दिशा में अब तक दो शिविरों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर सफल प्रयास किया गया है। **इस द्वितीय स्तर के शिविर में वे ही भाग ले सकेंगे, जिन्होंने प्राथमिक स्तर वाले शिविर में भाग लिया है।** इस शिविर में प्राथमिक स्तर वाले शिविर की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से विषयों का अनुभव करवाया जाएगा और वैसा ही सूक्ष्मता से, कठोरता से नियम व अनुशासन होगा।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. दिनचर्या के कुछ भाग में आकृति मौन भी अनिवार्य होगा।
३. प्रार्थी की न्यूनतम दसवीं के स्तर की योग्यता अनिवार्य है। इस हेतु प्रमाण–पत्र की प्रतिलिपि लाना आवश्यक है।
४. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
५. शारीरिक व मानसिक सात्विकता के लिए यथासम्भव भोजन की मात्रा निश्चित होगी।
६. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
७. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
८. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
९. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
१०. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
११. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
१२. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१३. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
१४. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व

शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. ११ से १५ मार्च,२०१४ में होने वाली **सन्ध्या गोष्ठी** स्थगित की गई है। पुन: निर्धारण होने पर सूचित किया जायेगा।

२. १३ से २० अप्रैल, २०१४ **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर,** सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. १६ से २३ मई, २०१४ **आर्यवीर शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

४. २४ से ३१ मई, २०१४ **संस्कृत सम्भाषण शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४७०९४९४

५. १ से ८ जून, २०१४ **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

६. १५ से २२ जून, २०१४- **योग-साधना शिविर (द्वितीय स्तर),** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

विशेष- परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित पूर्व दो ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविरों में प्रथम व उच्च प्रथम श्रेणी प्राप्त प्रशिक्षकों के लिए भी योग साधना शिविर (द्वितीय स्तर) में भाग लेने का अवसर रहेगा।

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

१३ से २० अप्रैल, २०१४, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर शुल्क १००० रु. है। १३ अप्रैल सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी। शिविर का समापन २० अप्रैल को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००३७५६, समय-मध्याह्न १.३० से २.३०।

विशेष- प्रतिभागी अपना आवेदन १५ मार्च २०१४ तक भेज देवें जिसमें कि नाम, पत्र व्यवहार का पूरा पता, अपना चित्र, दूरभाष संख्या स्पष्ट लिखा हो। स्वीकृति मिलने पर ३० मार्च तक अपना शुल्क अवश्य ही जमा करवाकर अपना पंजीयन करवा लेवें।

५० की सीमित संख्या में प्रथम पंजीयन करवाने वाले को ही शिविर में भाग लेने की अनुमति होगी।

पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१। ईमेल-psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

।। ओ३म् ।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

दु:ख-दु:ख का निवारण

- राज कुकरेजा

दु:ख जिसे कोई नहीं चाहता है, पर दु:खी हैं और सुख जिसे सब चाहते हैं पर सब पूर्ण रूप से सुखी नहीं हैं। जो इन्द्रियों के अनुकूल वो सुख और जो इन्द्रियों के प्रतिकूल वह दु:ख। ऋषि पतञ्जली जी ने योग दर्शन में एक सूत्र में कहा है- **हेय हेयहेतु, हान हानोपाय।** अर्थात् दु:ख, दु:ख का कारण, सुख, सुख का उपाय। वे कार्य-कारण के सम्बन्ध को मानते हैं कि कारण को हटा देने से कार्य स्वयं हट जाता है। सभी दु:ख से छूटना चाहते हैं परन्तु दु:ख के कारण को नहीं पकड़ पाते, सोचते हैं कि सुख का उपाय अधिक से अधिक धन की तिजोरी भर लेने से तथा जिन साधनों से व भोग सामग्री से शारीरिक सुख मिले उसका अधिक से अधिक मात्रा में संग्रह कर लेने से वे पूर्णत: सुखी हो जायेंगे। यह उन की मिथ्या धारणा है। प्राय: देखा जाता है कि संसार के सारे भोग-पदार्थ प्राप्त करके भी मानव अशान्त रहता है। ऋषि पतञ्जलि जी का मानना है कि विवेकी जन संसार के सभी विषय-भोगों में चार प्रकार का दु:ख मान कर उन्हें छोड़ देते हैं, इस बात को समझा ऋषि दयानन्द सरस्वती जी ने जिन का जन्म हुआ एक सम्पन्न परिवार में, घर में किसी प्रकार का अभाव न था, पर उन्हें सच्चे सुख की तलाश थी जिस कारण घर परिवार का त्याग कर सच्चे सुख की खोज में चल पड़े। महात्मा बुद्ध बचपन में जिन का नाम सिद्धार्थ था, जन्म राज महल में हुआ, गृहस्थी बने, एक बालक को जन्म दिया परन्तु एक रात को गृह त्याग दिया और सच्चे सुख की खोज में निकल पड़े। ऋषि का मानना है कि संसार में- **कुत्रऽपि कोऽपि सुखी न भवति।** गुरु नानक देव जी ने इसे सरल भाषा में कहा कि 'नानक दुखिया सब संसार'

सांख्य दर्शन के रचियता ऋषि कपिल संसार के समस्त दु:खों का वर्गीकरण तीन प्रकार के दु:खों में करते हैं। एक **आध्यात्मिक** जो आत्मा, शरीर में अविद्या, राग, द्वेष, मूर्खता और ज्वर पीड़ा आदि से होता है। दूसरा **आधिभौतिक** जो शत्रु, व्याघ्र और सर्प आदि से प्राप्त होता है। तीसरा **आधिदैविक** अर्थात् जो अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अतिशीत, अति उष्णता, मन और इन्द्रियों की अशान्ति से होता है। अधिकांश प्राणी आध्यात्मिक दु:ख जो शरीर और आत्मा सम्बन्धी है उससे पीड़ित रहते हैं। अविद्या ही इसका मूल कारण है। दर्पण में शरीर को देखते हैं, स्वयं को केवल शरीर ही मान लेते हैं और आत्मा जो शरीर का स्वामी है उस की उपेक्षा कर देते हैं। जब तक आत्मा को उस का भोजन जो ईश्वरीय आनन्द है नहीं दिया जाएगा, जीवन में शान्ति का स्वप्न, स्वप्न ही रहेगा। हम ने आत्मा को शरीर रूपी कमरे में बन्द कर दिया है। दिन-रात शरीर को सजाने में लगे रहते हैं। आत्मा की भूख मिटाने की कभी न तो चिन्ता की, न परवाह की, परिणामस्वरूप जीवन में अशान्ति का साम्राज्य छाया हुआ है। अविद्या के ही कारण जड़ मन को चेतन समझने लगते हैं और समझते हैं कि मन स्वयं ही विचारों को उठाता रहता है। अज्ञानता के कारण यह भूल जाते हैं कि आत्मा ही मन का स्वामी है, आत्मा की इच्छा के बिना मन कुछ भी करने में असमर्थ है। मन में अनावश्यक व हानिकारक विचारों को उठा कर हम स्वयं ही अपनी हानि कर रहे होते हैं। मन की शान्ति के लिए मन में सकारात्मक विचारों को हमें अधिक महत्त्व देना चाहिए। मन में नकारात्मक विचार मन को अशान्त बनाते हैं। नकारात्मक विचारों से पहले हम स्वयं को दु:खी करते हैं। इसलिए अति आवश्यक है कि मन को शिव संकल्प वाला बनाए। मन एक ऐसी नदी है जिसका प्रवाह निरन्तर बह रहा है और उसे मनुष्य अपनी बुद्धि का उचित प्रयोग करते हुए कल्याण की ओर बहा सकता है, यदि बुद्धि का प्रयोग समुचित न करें तो पाप की ओर भी बहा सकता है।

सारा विश्व अज्ञान में जीने के कारण दु:ख के सागर में गोते लगा रहा है। अपेक्षाओं के कारण भी हम दु:खी हो रहे हैं। मिथ्या अभिमान के कारण धारणा बना लेते हैं कि जैसी इच्छा होगी वैसी पूर्ण हो जायेगी। किन्तु ऐसे शत-प्रतिशत कभी किसी की इच्छा पूर्ण नहीं होती और भौतिक स्तर पर सब कामनाओं की पूर्ति हो ही नहीं सकती। हम चाहते हैं कि सभी लोग व सभी परिस्थितियाँ हमारे ही अनुकूल हों, जो असम्भव है, क्योंकि कर्म करने में सब स्वतन्त्र हैं। कर्त्ता तो कहते ही उसे हैं जो कर्तुम्, अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् में स्वतन्त्र हो अर्थात् चाहे तो करे, न चाहे तो न करे या उल्टा करे। सब के अपने विभिन्न संस्कार और योग्यताएँ होती हैं। प्रत्येक में जन्म-जन्मान्तर के संस्कार अलग-अलग हैं। ईश्वर ने कर्म का अधिकार तो सब को दिया है। अपने कर्तव्य का पालन करते नहीं हैं, दूसरों के कर्तव्य पर अपना अधिकार समझने लगते हैं। परिस्थितियाँ भी सब के लिए एक जैसी कभी नहीं हो सकती। कुम्हार को धूप चाहिए तो किसान को वर्षा। बाह्य जड़ व चेतन साधन हमारी खुशी का स्रोत हैं, ये भी एक बहुत बड़ी मिथ्या धारणा है। बाह्य (भौतिक साधन) चेतन (सन्तान व

परिवार) सब अनित्य हैं, जो स्वयं अनित्य, परिवर्तनशील हैं वे हमें क्या सुख देंगे। बड़ी बात लगती है कि सबका रिमोट अपने हाथ में रखना चाहते हैं तो अपना रिमोट दूसरों के हाथों क्यों रख कर दु:खी हो रहे होते हैं?

आज मनुष्य स्वार्थी व संकीर्ण बनता जा रहा है। सब सुख सामग्री अपने पास ही बटोर कर रखने का स्वभाव बनाता जा रहा है। विडम्बना तो यह है कि अपने दु:ख से इतना दु:खी नहीं है, जितना दु:खी दूसरों के सुख से है। मनुष्य अपने अभाव से इतना दु:खी नहीं है, जितना दूसरे के प्रभाव से दु:खी होता है। अभाव उसे इतना नहीं अखरता जितना यह अखरता है कि दूसरों के पास क्यों है। अपने भीतर जलन की ज्वाला उत्पन्न कर के स्वयं ही जलता रहता है। दूसरों से जलन और दूसरों से व्यर्थ की आशाएँ यदि ये दो चीजें हम छोड दें तो हम इस बहुमूल्य मानव जीवन को बहुत आनन्द से जी सकते हैं, अन्यथा व्यर्थ ही इसे खोदेंगे। इसे इस दृष्टान्त से भली प्रकार समझ सकते हैं- रामलाल और बाबूलाल दो वरिष्ठ नागरिक हैं, दोनों घनिष्ठ मित्र हैं, दोनों परस्पर सुख-दु:ख के साथी हैं। रामलाल का अपने घर में कोई मान सम्मान नहीं है, उपेक्षित सा जीवन या यूँ कहे तो अपने घर में कड़वे घूँट पी कर जीवन जी रहा है। वह सोचता है कि उस का मित्र बाबूलाल भी उसके ही समान उपेक्षित जीवन जी रहा होगा। लेकिन एक दिन जब उस का भ्रम टूटा, उसे पता चला कि मित्र तो बड़े मजे में बहुत ही सम्मान पूर्वक जिन्दगी गुजार रहा है तो अपने मित्र से कन्नी काटने लगा। उसकी छाती पर मानो सांप लौटने लगा हो। मित्र के साथ उस का व्यवहार ही एकदम बदल गया। बाबूलाल समझ गया कि उस का मित्र उस की सम्मानित जिन्दगी को नहीं पचा पा रहा है। बाबूलाल ने रामलाल को कहा- देखो मित्र ऐसा नहीं है जैसा तुम समझ रहे हो। ये सब मेरे परिवार वाले तुम्होर सामने नाटक कर रहे होते हैं। अब रामलाल को सन्तुष्टि हो गई कि केवल वह ही दु:खी नही है, उस का मित्र भी उसी के समान दु:खी है। ऋषि पतञ्जली सुन्दर सा दृष्टिकोण देते हैं कि सुखी से मैत्री, दुखी पर करुणा, पुण्य आत्मा को देखकर प्रसन्नता और अपुण्य आत्मा की उपेक्षा कर देने से चित्त प्रसन्न रहता है। प्रसन्न चित्त से एकाग्रता होती है। एकाग्रचित्त से ध्यान लगता है और ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना में भी मन लगता है। जिसका फल ऋषि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं सब दोष, दु:ख छूट कर परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण-कर्म-स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। आत्मा का बल इतना बढ़ता है कि वह पर्वत के समान दु:ख प्राप्त होने पर भी घबराता नहीं और सब को सहन करने का सामर्थ्य उसे ईश्वर प्रदान करता है यह तो हो नहीं सकता कि एकाग्र मन से ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करें और ईश्वर के आनन्द से वंचित रहें। यदि वंचित हैं तो देखें कि भूल कहाँ हो रही है। इस का कारण क्या है? शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है। अग्नि से शीत निवृत्त नहीं हो रहा तो इस का कारण है कि या तो अग्नि मन्द है या फिर अग्नि से दूर बैठे हैं। इसी प्रकार ईश्वर ध्यान में ईश्वर के आनन्द की उपलब्धि नहीं हो रही तो कारण को जानें। कारण है अविद्या जिस कारण ईश्वर के स्वरूप को जाने बिना उपासना कर रहे होते हैं। यथार्थ ज्ञान से ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जान कर जब अपने हृदय में ईश्वर के सच्चे स्वरूप की उपासना करते हैं, तब ईश्वर हृदय में अच्छी तरह प्रकाशित हो कर अविद्या अन्धकार को नष्ट कर सुखी करते हैं।

मिथ्या ज्ञान (अविद्या) दु:ख का मूल कारण है तो यथार्थ ज्ञान ही सुख का मूल कारण है। यथार्थ ज्ञान अर्थात् जो पदार्थ जैसा है उस को वैसा ही जानना। जड़ को जड़, चेतन को चेतन, सुख में सुख और दु:ख में दु:ख को समझना। यथार्थ ज्ञान से ईश्वर, जीव, प्रकृति को अलग-अलग जान लेना ही दु:ख नाश करने का उपाय है। योग के आठ अंगों को व्यवहार में लाने से यथार्थ ज्ञान का विकास होता है और अविद्या आदि दोषों का नाश होता जाता है। मिथ्या ज्ञान का हटना ही दु:ख का निवारण है।

ईश्वर से प्रार्थना है:

दूर अज्ञान के हों अन्धेरे, तू हमें ज्ञान की रोशनी दे,
हर बुराई से बचते रहें हम, जितनी भी दे भली जिंदगी दे।
सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खभाग् भवेत्।।

७८६/८, अर्बन एस्टेट, करनाल-१३२००१ (हरियाणा)

पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया

सभी विद्वानों व परोपकारी के सुधी पाठकों से निवेदन है कि अपना नाम, पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिन कोड सहित), दूरभाष संख्या और ई-मेल किसी भी माध्यम से भिजवाने का कष्ट करें जिससे कि परोपकारिणी सभा के वर्तमान के पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया में सहयोग मिल सके।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ जनवरी २०१४ तक)

१. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर, २. श्री अतुल शर्मा, अजमेर ३. श्री मदनमोहन, दिल्ली, ४. सुश्री अशिका, ब्यावर, राजस्थान, ५. श्री महताब राय, हुण्डवास, उ.प्र., ६. अंजना पम्प सर्विस, निम्बाहेडा, ७. श्रीमती मनीषा रावत, अहमदाबाद, ८. श्री सुनील धाडी, भोपाल, म.प्र., ९. श्री मनोज आर्य, हाथरस, उ.प्र., १०. श्री महावीर यादव, जयपुर, राजस्थान, ११. श्री एम.एल. गोयल, अजमेर, १२. श्री सुदेश राजेश कालरा, दिल्ली, १३. श्रीमती उमा सोनी, अजमेर १४. श्री तेजवीर सिंह व श्रीमती माला त्यागी, दिल्ली, १५. श्री जी.के. शर्मा, अजमेर, १६. डॉ. चरणसिंह, मुजफ्फरनगर, उ.प्र., १७. श्री अभिमन्यु आर्य, जोधपुर, राजस्थान, १८. श्री विजय कंचन गहलोत, अजमेर, १९. श्री सन्दीप, गाजियाबाद, उ.प्र., २०. श्री सदोरोमल खुबानी, साहिबाबाद, २१. श्री दयानन्द वर्मा, भीलवाड़ा, राजस्थान, २२. श्री दुपेश गोविन्द तिवाड़ी, अजमेर।

–परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ–भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ जनवरी २०१४ तक)

१. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर, २. श्री मदन मोहन, दिल्ली, ३. श्री रमेश रेगर, अजमेर, ४. श्री शशि आदर्श, दिल्ली ५. श्री आशीष कंसल, अजमेर, ६. श्री प्रेमचन्द रोपड़, पंजाब, ७. राजपुताना म्युजिक हाऊस, अजमेर ८. श्री दिनेश, अजमेर, ९. श्री विनोद शेखावत, अजमेर, १०. श्री विरदीचन्द गुप्त, जयपुर, ११. श्री आदित्य अंशुमान, भावनगर, गुजरात, १२. श्री मूलशंकर पारीक, जयपुर, राजस्थान, १३. श्रीमती उमा सोनी, अजमेर, १४. श्री राजेश त्यागी, अजमेर, १५. श्री बी.एल. बुनकर, जयपुर, राजस्थान, १६. श्री हरिशचन्द्र चौहान, अजमेर, १७. श्रीमती शकुन्तला आर्या, पानीपत, हरियाणा, १८. श्री सुशील कुमार गोयल, अजमेर, १९. श्री विजय कंचन गहलोत, अजमेर, २०. श्री बी.एस. सैनी, गुड़गाँव, हरियाणा, २१. श्रीमती मेहता माता, अजमेर, २२. श्री दयानन्द वर्मा, भीलवाड़ा, राजस्थान।

–परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गुरुकुल

(१ जनवरी से १८ जनवरी २०१४ तक)

१. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर, २. श्री शिवांश कंसल, अजमेर, ३. श्री विरदीचन्द गुप्त, जयपुर, राजस्थान, ४. श्री आशीष सिंह कटारिया, अजमेर, ५. श्री वासुदेव आर्य, अजमेर, ६. श्रीमती माया भार्गव, अजमेर, ७. श्री संजीव बंसल, सुलोन, ८. श्री मेघराज छंगाराम, अहमदाबाद, गुजरात, ९. सुश्री सरला महेश्वरी, केकड़ी, राजस्थान, १०. स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, वल्लभगढ़, हरियाणा।

–परोपकारिणी सभा, अजमेर।

राष्ट्र निर्माता – सरदार पटेल

नरेन्द्र मोदी के भाषणों से सरदार पटेल का नाम चर्चा में आ रहा है। पटेल राष्ट्रवादी व्यक्ति थे, उन्होंने भारत को एक राष्ट्र बनाने में महती भूमिका निभाई थी। सरदार पटेल जहाँ महात्मा गाँधी से जुड़े थे वहाँ आर्यसमाज से भी उनका निकट सम्पर्क था। सरदार पटेल ने अपनी मृत्यु से पूर्व जो सार्वजनिक व्याख्यान दिया था वह आर्यसमाज के मञ्च से ही दिया था। दिल्ली की आर्य समाजों की आर्य केन्द्रीय सभा है। इसकी स्थापना का श्रेय स्वामी विद्यानन्द सरस्वती को है। सरदार पटेल को ऋषि दयानन्द के बलिदान दिवस पर निमन्त्रित करने का श्रेय आपको ही है। आपने लाला देशबन्धु गुप्ता के माध्यम से सरदार पटेल को कार्यक्रम में आमन्त्रित किया है। इसकी चर्चा स्वामी जी ने अपनी पुस्तक 'खट्टी मीठी यादें' में पृ. ५४-५६ पर इस प्रकार की है-

सरदार पटेल- इन बड़े लोगों तक मेरी पहुँच नहीं थी। लाला देशबन्धु गुप्त ही मेरा माध्यम थे। अगले वर्ष मैंने उनसे कहा कि मेरी इच्छा इस बार ऋषि निर्वाणोत्सव पर सरदार वल्लभभाई पटेल को बुलाने की है। लाला जी ने रोष-भरे स्वर में कहा- अब ऐसा कुछ नहीं होगा। एक तरफ ये लोग तुम्हारें आदमियों की गालियाँ खाएँ और दूसरी ओर पण्डित नेहरू उनकी खिचाई करें। 'आखिर बात क्या है?' मेरे पूछने पर देशबन्धु जी बोले- गत वर्ष गाडगिल साहब ने कहा था कि देश स्वामी दयानन्द के रास्ते पर चला होता तो आज कश्मीर का मामला संयुक्त राष्ट्रसंघ में लटका हुआ न होता। यह वाक्य जमय्यतुल उल्मा ए हिन्द के अखबार 'अलजमीयत' में प्रमुखता से प्रकाशित किया गया, इस टिप्पणी के साथ कि गाडगिल साहब शुद्धि का प्रचार करते हैं। 'अलजमीयत' का यह पर्चा किसी ने मौलाना आज़ाद को दिखाया और मौलाना आजाद ने पण्डित नेहरू को। नेहरू जी ने गाडगिल साहब से जवाबतलब किया। इधर तुम्हारा रामगोपाल उन लोगों के कांग्रेसी होने के कारण उन्हें कोसता रहता है। जैसे-तैसे मैंने देशबन्धु जी को शान्त किया। सरदार पटेल आये। सरदार पटेल जैसे तेजस्वी पुरुष का आर्यसमाज के मंच पर पहली बार आगमन हो रहा था। इस बार सभा की अध्यक्षता बख्शी टेकचन्द जी ने की और ध्वजारोहण किया महात्मा आनन्द स्वामी जी ने। प्रातःकाल से ही घुड़सवार पुलिस रामलीला मैदान में फैली हुई थी। आर्य केन्द्रीय सभा के तत्त्वावधान में आयोजित किसी समारोह में इतनी उपस्थिति फिर कभी नहीं हुई। आर्यसमाज के इतिहास में पहली बार बी.बी.सी. लन्दन से आर्यसमाज के किसी उत्सव का समाचार प्रसारित हुआ था। कारण? पहली रात्रि को देर तक केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल की बैठक में नेपाल के सम्बन्ध में भारत की प्रतिक्रिया पर विचार हुआ। तत्सम्बन्धी निर्णय की घोषणा सरदार पटेल ने ऋषि निर्वाणोत्सव की सभा में की थी। यह अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व का विषय था। इसलिए उसे बी.बी.सी. ने प्रसारित किया, इन शब्दों के साथ- 'Sardar Patel was speaking at the death anniversary celebrations of Swami Dayanand Saraswati, founder of Arya Samaj.' इसके कुछ ही दिन बाद सरदार पटेल का मुम्बई में निधन हो गया। कुछ समाचार पत्रों ने उस अवसर पर जो एक फ़ोटो प्रकाशित किया था, उसके नीचे लिखा था- 'His last public appearance.' यह ऋषि निर्वाणोत्सव पर लिया गया फ़ोटो था। उसके बाद वे कोई भाषण नहीं दे सके थे- यह उनके जीवन का अन्तिम भाषण था।

-सम्पादकीय

Letter from Sardar Patel to Sir Girja Shankar Bajpai

NEW DELHI

4 November 1950

My Dear Sir Girja,

Thank you for your letter of the 3rd November 1950. I am sending herewith the note which you were good enough to send me. I need hardly say that I have read it with a great deal of interest and profit to myself and it has resulted in a much better understanding of the points at issue and general though serious nature of the problem.

The Chinese advance into Tibet upsets all our security calculations. Hitherto, the danger to India on its land frontiers has always come from the North-West. Throughout history we have concentrated our armed might in that region. For the first time, a serious danger is now developing on the North and North-East side; at the same time, our danger from the West or

North-West is in no way lessened. This creates most embarrassing defense problems and I entirely agree with you that a reconsideration of our military position and a redisposition of our forces are inescapable.

Regarding Communists, again the position requires a great deal of thought. Hitherto, the smuggling of arms, literature, etc. across the difficult Burmese and Pakistan frontier on the East or along the sea was our only danger. We shall now have to guard our Northern and North-eastern approaches also.

Unfortunately, all these approaches-Nepal, Bhutan, Sikkim and the tribal areas in Assam-are weak spots both from the point of view of communications and police protection and also established loyalty to India.

Even Darjeeling and Kalimpong area is by no means free from pro-Mongolian prejudices. The Nagas and other hill tribes in Assam have hardly had any contact with Indians. European missionaries and other visitors have been in touch with them, but their influence was,by no means, friendly to India and Indians. In Sikkim, there was political ferment some time ago. It seems to me there is ample scope for trouble and discontent in that small State.

Bhutan is comparatively quiet, but its affinity with Tibetans would be a handicap. Nepal (we all know too well, a weak oligarchic regime based almost entirely on force) is in conflict with an enlightened section of the people as well as enlightened ideas of the modern age. Added to this weak position, there is the irredentism of the Chinese. The political ambitions of the Chinese by themselves might not have mattered so much; but when they are combined with discontent in these areas, absence of close contact with Indians and Communist ideology the difficulty of the position increases manifold. We have also to bear in mind that boundary disputes, which have many times in history been the cause of international conflicts, can be exploited by Communist China and its source of inspiration, Soviet Russia, for a prolonged war of nerves, culminating at the appropriate time, in armed conflict.

We have also so take note of a thoroughly unscrupulous, unreliable and determined power practically at our doors. In your very illuminating survey of what has passed between us and the Chinese Government through our Ambassador, you have made out an unanswerable case for treating the Chinese with the greatest suspicion.What I have said above, in my judgment, entitles us to treat them with a certain amount of hostility, let alone a great deal of circumspection. Inthese circumstances, one thing, to my mind, is quite clear; and, that is, that we cannot be friendly with China and must think in terms of defense against a determined, calculating, unscrupulous, ruthless, unprincipled and prejudiced combination of powers, of which the Chinese will be the spearhead. There might be from them outward offers or protestations of friendship, but in that will be concealed an ultimate hideous design of ideological and even political conquest into their bloc. It is equally obvious to me that any friendlyor appeasing approaches from us would either be mistaken for weakness or would be exploited in furtherance of their ultimate aim. It is this general attitude which must determine the other specificquestions which you haveso admirably stated. I am giving serious consideration to those problems and it is possible I may discuss this matter with

you once more.

Yours sincerely,
VALLABHBHAI PATEL
Sir Girja Shankar Bajpai, I.C.S.,
Secretary-General, External Affairs
Ministry,
New Delhi.

सरदार पटेल द्वारा श्री गिरिजा शंकर बाजपेयी को लिखा पत्र

नई दिल्ली : दिनांक ०४ नवम्बर १९५०

प्रिय श्री गिरिजा,

आपके ०३ नवम्बर १९५० के पत्र के लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ। मैं आपको वह नोट (वापस) भेज रहा हूँ जो आपने कृपापूर्वक मुझे प्रेषित किया था। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि मैंने इसे ध्यान से पढ़ा है और मैं लाभान्वित हुआ हूँ। इससे मैं सम्बन्धित मुद्दे को बेहतर ढंग से समझ सका हूँ। और यह समस्या वास्तव में गम्भीर प्रकृति की है। तिब्बत में चीन की घुसपैंठ ने हमारी सुरक्षा-व्यवस्था के सारे परिकलन (कैलकुलेशन्स) गड़बड़ा दिये हैं। अभी तक भारत की भू-सीमाओं पर खतरा उत्तर-पश्चिम की ओर से होता था। समूचे इतिहास में हम अपनी सैन्य शक्ति उसी क्षेत्र में केन्द्रित रखते थे। अब ऐसा पहली बार हो रहा है कि गम्भीर खतरा उत्तर और उत्तर-पूर्व की दिशा में आ खड़ा हुआ है। इसके साथ ही यह भी यथार्थ है कि पश्चिम और उत्तर-पश्चिम में भी खतरा किसी भी प्रकार से कम नहीं है। इससे सुरक्षा की बहुत बड़ी समस्या पैदा हो गयी है। इस विषय में मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि हम अपनी सेना की तैनाती पर पुनर्विचार करें। सेना की तैनाती का पुनर्विन्यास अपरिहार्य प्रतीत होता है। जहाँ तक कम्युनिस्टों का प्रश्न है, स्थिति चिन्तित करने वाली है। अभी तक तो पूर्व में पाकिस्तान और बर्मा की सीमा पर तथा समुद्र की ओर से हथियारों एवं (कम्युनिस्ट) साहित्य की तस्करी का खतरा था। अब हमें अपनी उत्तर और उत्तर-पूर्वी सीमा के प्रवेश मार्गों की भी निगरानी करनी पड़ेगी। संचार व्यवस्था एवं पुलिस व्यवस्था तथा भारत के प्रति असंदिग्ध निष्ठा की दृष्टि से दुर्भाग्यवश ये सभी प्रवेश मार्ग- नेपाल, भूटान, सिक्किम तथा आसाम के जनजाति क्षेत्र हमारी दुर्बल स्थिति वाले हैं- यहाँ तक कि दार्जिलिंग तथा कलिमपोंग क्षेत्र भी मंगोलिया के प्रति झुकाव से मुक्त नहीं है। नागाओं एवं आसाम की अन्य जन-जातियों का भी भारतीयों के साथ कोई सम्पर्क नहीं है। यूरोपीय मिशनरी एवं अन्य पर्यटक इनके सम्पर्क में रहे हैं, किन्तु उनका प्रभाव किसी भी प्रकार से भारत के या भारतीयों के प्रति मित्रता वाला नहीं रहा है। सिक्किम में भी कुछ समय पूर्व राजनीतिक खलबली थी। उस छोटे से राज्य में भी असन्तोष और उपद्रव की पर्याप्त सम्भावना है। भूटान अपेक्षाकृत शान्त है परन्तु तिब्बतियों के साथ उसका नजदीकीपन हमारे लिए एक प्रकार की बाधा है। नेपाल (जैसा कि हम सब जानते हैं एक कमजोर अल्पतन्त्रीय कुलीन शासन है जो पूर्णत: सैनिक शक्ति पर निर्भर है) अपने यहाँ के बुद्धिजीवी वर्ग से तथा आधुनिक समय के प्रबुद्ध विचारों से विरोध-भाव रखता है। इसके अतिरिक्त एक कठिनाई यह है कि अमुक्त संयोजनवादी (विस्तारवादी) चीन साथ में है। चीनियों की राजनैतिक महत्त्वाकांक्षाएँ अपने आप में उतना चिन्ता का विषय न भी हों परन्तु उनके साथ उन क्षेत्रों में व्याप्त असन्तोष, भारतीयों के साथ उनका निकट सम्पर्क न होना तथा कम्युनिस्ट सिद्धान्तवाद और जुड़ जाता है तो हमारी स्थिति की कठिनाइयाँ कई गुणा बढ़ जाती है। हमें यह भी मस्तिष्क में रखना है कि सीमा के विवाद जो इतिहास में अन्तरराष्ट्रीय संघर्षों का कारण रहे हैं, का भी कम्युनिस्ट चीन दुरुपयोग कर सकता है और चिरस्थायी युद्धलिप्सा के लिए सोवियट रूस उसका प्रेरणा स्रोत है। यह सब कुछ किसी समय सशस्त्र संघर्ष का रूप ले सकता है। हमें यह ध्यान रखना है कि एक अनैतिक, अविश्वसनीय और दृढ़ संकल्प वाली शक्ति हमारी चौखट पर खड़ी है। हमारे और चीन सरकार के बीच जो कुछ संवाद हमारे राजदूत के माध्यम से हुआ है, आपके द्वारा किये गये उसके विवेकपूर्ण सर्वेक्षण में आपने एक ऐसा सटीक केस प्रस्तुत किया है कि चीन के साथ हम बहुत शंका एवं सावधानी के साथ व्यवहार करें। ऊपर जो कुछ मैंने कहा है अपने उस मूल्यांकन की दृष्टि से हमें सावधानी के रूप में चीन के प्रति अपने व्यवहार में आक्रामकता बरतनी चाहिए। इन परिस्थितियों में एक बात मेरे मस्तिष्क में स्पष्ट है कि हम चीन के साथ मित्रवत् नहीं हो सकते हैं।

हमें यह अवश्य विचार करना चाहिए कि दृढ़ संकल्पित, चौकस, बेईमान, क्रूर, सिद्धान्तहीन और पक्षपातपूर्ण शक्तियों, जिनका कि चीन अग्रणी है, के विरुद्ध हम अपनी सुरक्षा मजबूत करें। उनकी ओर से बाह्य रूप में (दिखावे के लिए) मित्रता का प्रस्ताव किया जा सकता है परन्तु उसके पीछे भी उनकी विचारधारा की कुटिल योजना और अपने पक्ष की राजनैतिक विजय की गुप्त इच्छा ही होगी। मुझे तो यह पूर्णत: स्पष्ट है कि हमारी ओर से उनके प्रति कोई मित्रता या तुष्टिकरण की बात को

हमारी दुर्बलता समझा जायेगा और वे इसका उपयोग अपनी अन्तिम विस्तारवादी योजना को आगे बढ़ाने के लिए करेंगे। यही वह वास्तविक वस्तु-स्थिति है कि उसके आलोक में उन विशेष प्रश्नों का निर्धारण किया जाए जिनका कि आपने संकेत किया है। उन समस्याओं पर मैं गम्भीरता से विचार कर रहा हूँ और यह सम्भव है कि इस विषय पर मैं एक बार पुनः आपसे चर्चा करूँ।

भवदीय

(वल्लभभाई पटेल)

श्री गिरिजा शंकर बाजपेयी, आई.सी.एस.

महासचिव, विदेश मन्त्रालय,

नई दिल्ली।

Sardar Patel Exhorts people to stand unitedly to see conditions in Tibet and Nepal and defend their country

The Hindustan Times, 11 November 1950

Sardar Patel said in Delhi that the present or potential dangers arising from what was happening in Tibet and Nepal made it incumbent on the people to rise above party squabbles and unitedly defend their newly-won freedom. The path shown by Mahatma Gandhi and Swami Dayanand, he added, would help the people to tide over these none too easy times. Sardar Patel was addressing a meeting organized by the Central Aryan Association to commemorate the 67th death anniversary of Swami Dayanand Saraswati, social reformer and thinker.

Referring to the recent developments in Nepal, Sardar Patel said: "In this country, our near neighbour, the Raja has sought sanctuary in the Indian Embassy. How could we refuse to give him refuge? We had to give it. Those who are wielding real power today in Nepal do not accept the Raja as the head of the State. They have installed the Raja's three-year-old grandson on the gaddi. They want us to accept this position. How can we do so?"

Sardar Patel emphasized that the "internal feud" in Nepal had laid India's frontiers in the north wide open to outside dangers. It was imperative, therefore, for Indians to be well prepared to meet any challenge that might come from any quarter.

Sardar Patel criticized Chinese intervention in Tibet and said that to use the 'sword' against the traditionally peace-loving Tibetan people was unjustified. No other country in the world was as peace-loving as Tibet. India did not believe, therefore, that the Chinese Government would actually use force in settling the Tibetan question.

"The Chinese Government," he said, "did not follow India's advice to settle the Tibetan issue peacefully. They marched their armies into Tibet and explained this action by talking of foreign interests intriguing in Tibet against China. But this fear is unfounded: no outsider is interested in Tibet. India made this very plain to the Chinese Government. If the Chinese Government had taken India's advice, resort to arms would have been avoided."

Continuing, Sardar Patel said that nobody could say what the outcome of Chinese action would be. But the use of force ultimately created more fear and tension. It was possible that when a country got drunk with its own military strength and power, it did not think calmly over all issues. But use of arms was wrong. In the present state of the world, such events might easily touch off a new world war, which would mean disaster for mankind.

In these difficult times, Sardar Patel said, the duty of the Indian people lay not

in fleeing from trouble but facing it boldly. That was the real message of both Swami Dayanand and Mahatma Gandhi. "Do not let cowardice cripple you. Do not run away from danger. The three-year-old freedom of the country has to be fully protected. India today is surrounded by all sorts of dangers and it is for the people today to remember the teachings of the two great saints and face fearlessly all dangers."

The Deputy Prime Minister continuing declared: "In this kalyug we shall return ahimsa for ahimsa. But if anybody resorted to force against us we shall meet it with force." Sardar Patel said that Swami Dayanand was one of the two great saints Gujarat gave to the world. Although Swami Dayanand and Mahatma Gandhi were born in Gujarat, they had dedicated their lives to the service of mankind. Ultimately they belonged to not only the whole of India but the world. It was for the people now to understand the teachings of these two saints and follow them in their actual lives. The greatest contribution of Swami Dayanand, he said, was that he saved the country from falling deeper into the morass of helplessness. He actually laid the foundations of India's freedom. A movement against untouchability, later to be supported by Gandhiji, was launched, and reconversion to Hinduism of the already forcibly converted persons was started. Swami Dayanand put a complete stop to the tendency in those days of preaching adharma in the name of dharma, which had made the Hindu Dharma the laughing stock of the world.

"Swami Dayanand wiped off," he said, "the dirt and grime that had settled on the Hindu Dharma. He swept aside the cloud of superstition shrouding it and let in light."

In the Indian Constitution untouchability had been declared a crime and Hindi accepted as the national language. It was actually Swami Dayanand, Sardar Patel said, who first propagated that Hindi be made the national language.

People should also remember that Swamiji did not get foreign education. He was the product of the Indian culture. Although it was true that they in India had to borrow whatever was good and useful from other countries, it was right and proper that Indian culture was accorded its due place.

तिब्बत और नेपाल के हालात को देखते हुए सरदार पटेल ने देशवासियों को अपने देश की रक्षा करने हेतु संगठित होने के लिए झकझोरा

दि हिन्दुस्तान टाइम्स, ११ नवम्बर १९५०

सरदार पटेल ने दिल्ली में कहा कि तिब्बत और नेपाल में जो घटनाएँ घट रही हैं उनसे उपजे वर्तमान खतरों एवं सम्भावित खतरों से अपनी नवअर्जित स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए देशवासी अपनी पार्टी की क्षुद्र बातों से ऊपर उठकर संगठित हों। उन्होंने आगे कहा कि महात्मा गान्धी और स्वामी दयानन्द के दिखाये मार्ग पर चलकर हम वर्तमान कठिनाइयों से पार पा सकते हैं। समाज सुधारक एवं चिन्तक स्वामी दयानन्द के ६७वें बलिदान दिवस पर सरदार पटेल केन्द्रीय आर्य संस्था द्वारा आयोजित सभा को सम्बोधित कर रहे थे। नेपाल में हुई हाल ही की घटनाओं की ओर संकेत करते हुए सरदार पटेल ने कहा, ''हमारे इस पड़ौसी देश में वहाँ के राजा ने भारतीय दूतावास में शरण माँगी है। हम उन्हें शरण देने से किस तरह मना कर सकते हैं? हमने शरण दे दी। नेपाल में इस समय वास्तविक सत्ता जिनके कब्जे में है, वे राजा को राज्य का प्रमुख स्वीकार नहीं करते। उन्होंने राजा की गद्दी पर राजा के तीन वर्ष के पौत्र को बैठा दिया है। वे हमसे इस स्थिति को स्वीकार करने की आशा करते हैं। हम ऐसा कैसे कर सकते हैं?''

सरदार पटेल ने जोर देकर कहा कि नेपाल की आन्तरिक कलह ने भारत की उत्तर की सीमाओं पर बाह्य

खतरों के मंडराने की सम्भावना बढ़ा दी है। इसलिए भारतीयों के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि किसी भी ओर से आने वाली किसी भी चुनौती के लिए हम अच्छी प्रकार तैयार रहें।

सरदार पटेल ने तिब्बत में चीन की दखलन्दाजी की आलोचना की और कहा कि तिब्बत के परम्परागत रूप से शान्ति प्रिय लोगों के विरुद्ध तलवार का प्रयोग न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता। संसार का अन्य कोई राष्ट्र ऐसा शान्तिप्रिय नहीं है जैसा तिब्बत है। इसलिए भारत ऐसा नहीं मानता था कि चीन सरकार तिब्बत के प्रश्न को हल करने के लिए शक्ति का प्रयोग करेगी। पटेल ने कहा कि ''चीन सरकार ने भारत की तिब्बत के मामले को शान्तिपूर्वक हल करने की सलाह नहीं मानी। उन्होंने अपनी सेना तिब्बत में भेज दी और इस सैन्य कार्यवाई को यह कहकर सही ठहराने की कोशिश की कि तिब्बत में विदेशी तत्त्व चीन के हितों के विरुद्ध कार्य कर रहे थे। परन्तु चीन का भय निराधार था। तिब्बत में किसी बाहरी शक्ति की कोई रुचि नहीं है। भारत ने यह बात चीन सरकार को सुस्पष्ट कर दी थी। यदि चीन सरकार भारत की सलाह मान लेती तो शस्त्रों के प्रयोग (सैन्य कार्यवाई) से बचा जा सकता था।''

अपनी बात जारी रखते हुए सरदार पटेल ने कहा कि कोई भी नहीं बता सकता कि चीन की इस कार्यवाई का क्या परिणाम होगा। परन्तु बल प्रयोग ने अन्ततः भय एवं तनाव को बढ़ाया ही है। ऐसा इसलिए हुआ कि जब कोई देश अपनी सैन्य शक्ति एवं बल के नशे में चूर हो, तो वह किसी मामले पर शान्तिपूर्वक विचार नहीं कर सकता। तथापि सैन्य कार्यवाई अनुचित थी। संसार की वर्तमान स्थिति में, ऐसी घटनाओं से नया विश्वयुद्ध शुरु हो सकता है, जिसका अर्थ होगा मानव जाति का विनाश। इस कठिन समय में, सरदार पटेल ने कहा कि, भारतीय लोगों का कर्त्तव्य इस कठिनाई से भागना नहीं, इस कठिनाई का बहादुरी से सामना करना है। स्वामी दयानन्द एवं महात्मा गान्धी-दोनों का-यही वास्तविक सन्देश था- ''कायरता आप पर हावी न हो। खतरों से आप भागो नहीं। भारत की साढ़े तीन वर्ष पुरानी स्वतन्त्रता की पूर्णतः रक्षा की जानी चाहिए। आज भारत सब प्रकार के खतरों से घिरा हुआ है। ऐसे में देशवासियों का यह कर्त्तव्य है कि वे इन दो महान् सन्तों के उपदेशों को याद रखें और सभी खतरों का निडर होकर सामना करें।''

बात जारी रखते हुए उप प्रधान मन्त्री ने घोषणा की, ''आज के कलियुग में हम अहिंसा के बदले में अहिंसा का व्यवहार करेंगे। परन्तु यदि किसी ने हमारे विरुद्ध बल प्रयोग किया तो हम भी उसका उत्तर बलपूर्वक देंगे।'' सरदार पटेल ने कहा कि स्वामी दयानन्द उन दो सन्तों में से एक है जो गुजरात ने विश्व को दिये। यद्यपि स्वामी दयानन्द और महात्मा गान्धी का जन्म गुजरात में हुआ था परन्तु उन्होंने अपना जीवन मानवता की सेवा में अर्पित कर दिया। अन्ततः उनका सरोकार केवल सारे भारत से ही नहीं बल्कि सारे संसार से रहा। अब यह लोगों के लिए है कि वे इन दो सन्तों के उपदेशों को समझें और अपने वास्तविक जीवन में उनका पालन करें। उन्होंने कहा कि स्वामी दयानन्द का सबसे बड़ा योगदान यह था उन्होंने देश को असहाय होने की दलदल में गहरे धंसने से बचा लिया। उन्होंने वास्तव में भारत की स्वाधीनता की नींव रखी। अस्पृश्यता के विरुद्ध आन्दोलन, जिसका बाद में महात्मा गान्धी ने समर्थन किया, स्वामी जी ने शुरु किया था। जिन लोगों का कभी बलपूर्वक धर्मान्तरण कर दिया गया था उन्हें पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षित करने का कार्य स्वामी जी ने आरम्भ किया। धर्म के नाम पर अधर्म का उपदेश देने की उस समय में प्रचलित उस प्रवृत्ति पर स्वामी दयानन्द ने पूर्णतः रोक लगा दी जिसने हिन्दू धर्म को संसार के सामने उपहास की वस्तु बना दिया था।

सरदार पटेल ने कहा, ''स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म के ऊपर जमा हो गयी हुई सारी गन्दगी और कालिख को हटा दिया। अन्धविश्वासों का जो घटाटोप हिन्दू धर्म पर छा गया था उसे भी स्वामी जी ने दूर कर दिया और उसे स्वच्छ रूप में प्रकाशित कर दिया।

भारत के संविधान में अस्पृश्यता को अपराध घोषित किया गया है तथा हिन्दी को राष्ट्र भाषा स्वीकार किया गया है। सरदार पटेल ने कहा कि यह वास्तव में स्वामी दयानन्द ही थे जिन्होंने सर्वप्रथम प्रतिपादित किया कि हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बनाया जाए। लोगों को यह तो विदित होना चाहिए कि स्वामी जी ने विदेशी शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। वह भारतीय संस्कृति की ही देन थे। तथापि स्वामी जी अन्य देशों से वह सब कुछ लेने को तैयार थे जो अच्छा और उपयोगी हो। यह सही और उपयुक्त ही था कि भारतीय संस्कृति को उसका उचित स्थान मिले।

अनुवादक- सत्येन्द्रसिंह आर्य, मेरठ

सभा और सेनापति आदि मनुष्यों को चाहिये कि उत्तम से उत्तम पदार्थों के भोजन से शरीर और आत्मा को पुष्ट और शत्रुओं को जीत कर न्याय की व्यवस्था से सब प्रजा का पालन किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३८

पुस्तक-परिचय

१. पुस्तक का नाम - वेद (गुजराती अनुवाद)
अनुवादक - प्रो. दयालमुनि आर्य
प्रकाशक - वानप्रस्थ साधक आश्रम रोजड़, पो. सागपुर, वा. तलोद, जि. साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७
दूरभाष - ०२७७०-२८७४१७

सर्वकल्याणमय तो केवल ईश्वर ही है, उसके द्वारा दिया गया ज्ञान भी उतना ही कल्याणमय है, जिस ज्ञान को हम वेद कहते हैं। वेद को परमेश्वर ने मानव मात्र के लिए आदि सृष्टि में उत्पन्न किया। आदि सृष्टि से लेकर जब तक मनुष्य समाज वेद के अनुसार अपने जीवन को चलाता रहा तब तक उसका आध्यात्मिक और भौतिक विकास होता रहा। क्योंकि वेद ही एक ऐसा है जिसमें सब प्रकार की सत्य विद्याएँ हैं। उनसे व्यक्ति अपने अध्यात्म को बढ़ाना चाहे तो वह उसको बढ़ाते हुए उसके चरम तक जा सकता है, ऐसे ही भौतिक विकास को भी अत्यधिक बढ़ा सकता है। वेद में मानव के लिए जो-जो कल्याणकारी है उन सबका ज्ञान है, उपदेश है। वेद में आयुर्वेद, शिल्प विद्या, तार विद्या, विमान विद्या, गणित विद्या, भूगोल-खगोल विद्या, धनुर्विद्या, राजधर्म विद्या, सृष्टि विद्या, भूगर्भ विद्या, कृषि विज्ञान विद्या, व्यवहार विद्या, अध्यात्म विद्या आदि सत्य विद्याएँ हैं।

वेद को समस्त ऋषियों ने सर्वोपरि माना हैं क्योंकि वेद स्वत: प्रमाण है उसको प्रमाणित करने के लिए किसी और प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। जैसे सूर्य को दिखाने के लिए किसी और प्रकाश की आवश्यकता नहीं रहती। महर्षि दयानन्द ने इस बात को अत्यधिक प्रबलता से रखा। महर्षि ने वेद की सार्वभौमता देखते हुए, वेद का भाष्य किया। जो भाष्य सर्वाङ्गपूर्ण, ऋषि-महर्षियों की शैली के अनुकूल, व्याकरण, निरुक्त, ब्राह्मण, ग्रन्थों से सम्मत तथा परस्पर सुसंगत होने से आज तक कोई विद्वान् उनके भाष्य को त्रुटिपूर्ण सिद्ध नहीं कर सका। इस प्राचीन शैली को अपनाकर कोई भी वेदभाष्यकार वेद में इतिहास, मूर्ति-पूजा, मृतकश्राद्ध, अवतारादि अवैदिक मन्तव्यों को सिद्ध नहीं कर सकता। महर्षि दयानन्द चारों वेदों का भाष्य करने में लगे हुए थे। यजुर्वेद का पूर्ण भाष्य और ऋग्वेद का सातवें मण्डल के ६१वें सूक्त के कुछ मन्त्रों का भाष्य हो पाया था कि हमारे दुर्भाग्य से....। अन्यथा महर्षि ने स्वयं लिखा है ''परमात्मा की कृपा से मेरा शरीर बना रहा और कुशलता से वह दिन देखने को मिला कि वेदभाष्य पूर्ण हो जाये तो निस्संदेह आर्यावर्त देश में सूर्य का सा प्रकाश हो जायेगा कि जिसको मेटने और झेंपने को किसी का सामर्थ्य न होगा, क्योंकि सत्य का मूल ऐसा नहीं जिसको कोई सुगमता से उखाड़ सके और कभी भानु के समान ग्रहण भी आ जावे तो थोड़े ही काल में उग्रह अर्थात् निर्मल हो जायेगा।'' (भ्रान्ति निवारण)

महर्षि की इच्छा थी कि हमारे शास्त्रों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद होकर सब मनुष्यों के पास पहुँचे जिससे वे सुगमता से ज्ञान को प्राप्त हो सके। महर्षि की इसी भावना को लेते हुए वानप्रस्थ आश्रम रोजड़ ने चारों वेदों का गुजराती अनुवाद करवाकर गुजराती भाषियों के लिए अत्यन्त उपकार का काम किया है। वानप्रस्थ साधक आश्रम रोजड़ प्रकाशन विभाग ने अनेकों आध्यात्मिक, सैद्धान्तिक एवं प्रेरक पुस्तकों का प्रकाशन कर प्रबुद्ध एवं जन सामान्य तक पहुँचा प्रशंसनीय कार्य किया है, कर रहा है। यह करते हुए जो अब चारों वेदों का गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया है, यह कार्य ईश्वर की दृष्टि से अत्यधिक पुण्यदायी हो गया है। चारों वेदों का गुजराती अनुवाद करने वाले अनेक गुणों से युक्त, सादगी व सरलता की मूर्ति, आयुर्वेद के मर्मज्ञ, ऋषि जीवनी के अन्वेशक, अनेकों आयुर्वेद विषयक पुस्तकों के लेखक, जिनकी लगभग १८ पुस्तकें आयुर्वेद विश्वविद्यालय में पढ़ाई जाती हैं, अनेक पुरस्कारों से सम्मानित प्रो. दयाल मुनि आर्य हैं। यह अनुवाद, जितना महर्षि दयानन्द का भाष्य उपलब्ध है उसका और जो बचा है वह योग्य वैदिक विद्वानों द्वारा किये भाष्य का है। अनुवाद पदच्छेद व भावार्थ का है। अनुवादक ने इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि जो महर्षि का भाष्य है उसका जैसे का तैसा अनुवाद किया जाए। अन्य विद्वानों का जो भाष्य था, उसमें से जो अधिक संगत, सिद्धान्तानुकूल, महर्षि के मन्तव्यों से युक्त था उसी को लेकर अनुवाद किया है। ऐसा करते हुए अनुवादक के परिश्रम को पाठक जान सकते हैं कि इस कार्य के लिए उन्होंने कितना घोर प्रयत्न किया होगा।

यह वेदरूपी पुस्तक बहुत ही आकर्षक, रंगीन, सुन्दर कागज पर, दो रंगी छपाई से युक्त, देश-विदेश में वैदिक सिद्धान्तों को फैलाने वाले, उदारमना, विद्वान् आचार्य ज्ञानेश्वर जी ने अपने अत्यन्त पुरुषार्थ से प्रकाशित की है। प्रत्येक खण्ड में आचार्य श्री ने प्रकाशकीय लिखा है, सो पाठकों को पढ़ने को मिलेगा। अपने प्रकाशकीय में स्वार्थी पण्डितों के अशुद्ध भाष्य और महर्षि दयानन्द के शुद्ध भाष्य के विषय में लिखते हैं ''मध्यकाल में लगभग २५०० वर्ष पूर्व स्वार्थी पण्डितों, विद्वानों ने राजा, समाज से अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए वेदों का अशुद्ध भाष्य करके उनके

मनमाने व विकृत अर्थ किये। सारी बुराइयों को वेदों से प्रमाणित करने का दुष्पाप किया। जिसे अज्ञानी लोगों ने स्वीकार कर लिया और धर्म के नाम पर ऐसी दुर्गति हुई है कि इसे देख कर लज्जा आती है।

स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने इन सबको देख कर वेदों का शुद्ध ऋषि परम्परा के अनुरूप भाष्य किया। जिसमें कोई भी असत्य, तर्क-युक्ति से असंगत, असंभव, अप्रमाणिक, अवैज्ञानिक बातें नहीं हैं। यदि उनके किये वेदों के भाष्य को राजा और विद्वान् लोग सर्वमान्य करा दें तो पृथ्वी पर पुनः स्वर्ग स्थापित हो सकता है।'' इन सभी खण्डों में प्रो. दयाल मुनि जी का अनुवादकीय है जिससे पाठकों को वेद परिचय और अनुवाद के विषय में जानने को सरलता होगी। साथ ही इन खण्डों में गुजरात के मुख्यमन्त्री नरेन्द्र मोदी जी का सन्देश भी पढ़ने को मिलेगा। अभी तक यजुर्वेद-सामवेद एक-एक खण्ड में और ऋग्वेद के तीन खण्डों का प्रकाशन हो चुका है। तीन खण्ड ऋग्वेद का चौथा खण्ड व अथर्ववेद के दो खण्ड प्रकाशित होने हैं। आकर्षक आवरण, सुन्दर कागज व छपाई और दृढ़ बन्धन से युक्त वेद रूपी पुस्तक गुजराती भाषियों के लिए अत्यन्त कल्याणकारी सिद्ध होगी, इसी आशा के साथ।

सोमदेव, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

२. पुस्तक का नाम- आदर्श-विद्यार्थी

लेखक- बलेश्वर मुनि

प्रकाशक- महर्षि दयानन्द मिशन, ए-१/१३, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३

मूल्य- २०/-, **पृष्ठ संख्या**- ८९

आज विद्यार्थियों का जीवन किस ओर जा रहा है- वे अनपेक्षित व निम्नकोटि के कार्य कर रहे हैं। बालक/बालिका में संस्कारों का होना परम आवश्यक है। यह संस्कार-माता, पिता, परिवार, समाज व देश से मिलते हैं। आज के भौतिकवादी युग में चलचित्र, दूरदर्शन, अन्यान्य पाठ्य सामग्री भी ऐसी परोसी जा रही है उससे विद्यार्थी अपने आदर्श से भटक जाता है। विद्यार्थी अपने उच्च आदर्शों पर चलें उसके लिए मुनि जी अनेक बिन्दुओं के पालनार्थ आंग्ल-हिन्दी भाषा में सामग्री को संजोया है। ऐसी पुस्तकों की आज नितान्त आवश्यकता है। बालक सही मार्ग पर चलकर आदर्श विद्यार्थी बनें, यही अभिलाषा मुनि जी की है। पुस्तक में कतिपय बिन्दु हैं जैसे विद्यार्थी, ध्यान, नियम, महत्त्वपूर्ण शब्द, व्यवहार, महान् कैसे बने, आदि-आदि।

पुस्तक लघु है फिर भी सारगर्भित है अतः घर-घर तक पुस्तक पहुँचे, यह हमारा कर्त्तव्य होना चाहिए। तभी आदर्श विद्यार्थी की अपेक्षा की जा सकती है। मुनि जी ने न्यूनता में अधिकता प्रदान की है। सभी पठन कर लाभ उठायें।

३. पुस्तक का नाम- ऋषि-अर्पण

लेखक- अभिमन्यु कुमार खुल्लर

प्रकाशक- ज्ञान मन्दिर प्रकाशन, पाटनकर बाजार, लश्कर, ग्वालियर-४७४००१

मूल्य- १२५/-, **पृष्ठ संख्या**- १४४

साहित्य सृजन एक कला है। लेखक अपनी लेखनी से किस ओर ध्यानाकर्षण करना चाहता है। यह भाव उसके हृदय के कटु सत्य को सामने रखने का प्रयास करता है। पाठक भी सोचते हैं कि लेखक हमें किस ओर मोड़ दे रहा है स्पष्टता तब झलकती है जब पुस्तक का आद्योपांत अध्ययन कर लिया जाता है। ऐसी ही पुस्तक ऋषि-अर्पण है। जिसमें महर्षि दयानन्द विषयक, ईश्वर विषयक, सामाजिक सरोकार, विविध, महाभारत के दो अन्यतम पात्र द्वारा हमें झकझोर दिया है।

ईश्वर के अनेक नाम हैं। हम उनकी आराधना आदि किस प्रकार करें। हमारे कर्त्तव्य क्या और क्यों हैं? प्रार्थना, उपासना, ईश्वर विश्वास आदि पर गहन विचार दिए हैं। कर्मफल के सिद्धान्त पर चर्चा महत्त्वपूर्ण है। पुस्तक में स्वामी जी के रङ्गीन व श्यामश्वेत में चित्र भी चार चाँद लगा रहे हैं। लेखक ने प्राचीनता-अर्वाचीनता को भी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है- आज समाज समलैंगिकता पर क्या सोच बना रहा है? आर्यसमाजी निकृष्ट क्यों हो रहे हैं? अपनी टीस को भी प्रस्तुत किया है। 'ऋषि-अर्पण' आज के युग के लिए पठनार्थ सामग्री है। सभी इसका लाभ उठावें। लेखक का चिन्तन व देन हृदयग्राही है। साधुवाद।

देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

मनुष्यों को सत्यविद्या, धर्म से संस्कार की हुई वाणी वा शिल्पविद्या से संप्रयोग की हुई बिजुली आदि विद्या को सब मनुष्यों के लिये उपदेश वा ग्रहण और सुख-दुःख की व्यवस्था को भी तुल्य ही जानके सब ऐश्वर्य्य को परोपकार में संयुक्त करना चाहिये और किसी मनुष्य को इस प्रकार का व्यवहार कभी न करना चाहिये कि जिससे किसी की विद्या-धन आदि ऐश्वर्य की हानि होवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.२२।

जिज्ञासा समाधान – ५६

-आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा १- आचार्य जी नमस्ते।

मेरी जिज्ञासा वर्तमान की आश्रम व्यवस्था पर है, उसमें भी संन्यास आश्रम पर। महर्षि दयानन्द जी ने एक आदर्श संन्यास को अपने ग्रन्थों में उद्धृत किया है। वर्तमान में आर्यसमाज वा अन्यत्र कुछ संन्यासियों को छोड़ ऋषि की कसौटी पर नहीं उतर रहे। मेरी जिज्ञासा- १. संन्यासी कहते किसको हैं। २. संन्यास का अधिकारी कौन है? ३. संन्यास कब लेना चाहिए? ४. संन्यासी का कर्त्तव्य क्या है? इन सभी को जनाने की कृपा करें।

विक्रम आर्य, कटोसन, धनपुरा, महसाना

समाधान- समाज को उन्नत, शिक्षित व सभ्य बनाने के लिए ऋषियों ने मनुष्य जीवन को चार भागों में बाँटा है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। यूँ तो ये चारों आश्रम ही अपने-अपने स्थान पर श्रेष्ठ हैं। ब्रह्मचर्य आश्रम न हो तो व्यक्ति शिक्षित व विद्वान् न हो पावे, गृहस्थ के बिना लोक व्यवहार में व्यक्ति अधूरा रह जाये, वानप्रस्थ के बिना व्यक्ति का जीवन चिन्तन-मनन और तपस्या का अभ्यासी व एकान्त सेवी नहीं हो पाता और चतुर्थ आश्रम संन्यास के बिना पूर्ण विज्ञान को प्राप्त न होकर मोक्ष को प्राप्त नहीं हो सकता।

आपकी जिज्ञासा के अनुसार यहाँ चौथे आश्रम संन्यास के विषय में ही लिखते हैं। संन्यास की महत्ता बताते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं ''जैसे शरीर में सिर की आवश्यकता है, वैसे ही आश्रमों में संन्यासाश्रम की आवश्यकता है। क्योंकि इसके बिना विद्या धर्म कभी नहीं बढ़ सकता और दूसरे आश्रमों को विद्याग्रहण, गृहकृत्य और तपस्चर्यादि का सम्बन्ध होने से अवकाश बहुत कम मिलता है। पक्षपात छोड़कर वर्तना दूसरे आश्रमों को दुष्कर है। जैसा संन्यासी सर्वतोमुक्त होकर जगत् का उपकार करता है वैसा अन्य आश्रमी नहीं कर सकता। क्योंकि संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है, उतना अन्य आश्रमी को नहीं मिल सकता।'' स.प्र.स. ५

यहाँ महर्षि ने संन्यास की महत्ता में बहुत बड़ी उपमा सिर की दी है। यूँ तो शरीर के सभी अङ्ग महत्त्वपूर्ण हैं किन्तु सिर शरीर का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अङ्ग है। क्योंकि हाथ-पैर आदि अङ्ग किसी कारण न भी रहें तो भी शरीर चल सकता है, चलता है किन्तु सिर किसी कारण से न रहे तो शरीर तत्काल काम करना बन्द कर देता है। इसी प्रकार समाज में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ ये सभी महत्त्वपूर्ण हैं, किन्तु संन्यास आश्रम अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि संन्यासी समाज को दिशा देता है, मार्ग दिखाता है। जैसे सिर (मुख मण्डल) में आँख, कान, नासिका आदि इन्द्रियाँ हैं और इनके कारण हमें जगत् के पदार्थों का बोध होता रहता है। वैसे ही संन्यासी के ब्रह्मज्ञान, तप, त्याग, वैराग्य आदि के कारण समाज को दिशा बोध होता रहता है।

१. महर्षि दयानन्द की भाषा में ''संन्यास संस्कार उसको कहते हैं कि जो मोहादि आवरण, पक्षपात छोड़ के विरक्त होकर सब पृथिवी में परोपकारार्थ विचरे अर्थात् **सम्यङ् न्यस्यन्त्यधर्माचरणानि येन वा सम्यङ् नित्यं सत्यकर्मस्वास्त उपविशति स्थिरीभवति येन स संन्यासः, संन्यासो विद्यते यस्य स संन्यासी।**'' सं.वि. अर्थात् जिसके द्वारा अधर्माचरणों को अच्छे प्रकार छोड़ा जाता है अथवा जिसके द्वारा सत्कर्मों में नित्य ही अच्छे प्रकार स्थिर होना होता है उसको संन्यास कहते हैं और जिसमें इस प्रकार का संन्यास विद्यमान है उसको संन्यासी कहते हैं, वह संन्यासी कहाता है। महर्षि के इस संन्यास में दो मुख्य बाते हैं, एक अधर्म को छोड़ना और दूसरा सत्कर्मों में स्थिर होना। बिना योग्यता के मात्र काषाय वस्त्र धारण करने का नाम संन्यास नहीं है।

२. संन्यास लेने का अधिकारी केवल ब्राह्मण है। यहाँ ब्राह्मण से जातिगत ब्राह्मण न लेवें अपितु जो सब वर्णों में पूर्ण विद्वान्, धार्मिक, परोपकार प्रिय मनुष्य है उसी का नाम ब्राह्मण है। ऐसा व्यक्ति संन्यास लेकर जगत् का अधिक उपकार कर सकता है। संन्यास का अधिकारी अनपढ़, गंवार, स्वार्थी, विषय लम्पट, लोभी कभी भी नहीं हो सकता क्योंकि ऐसा व्यक्ति जगत् का कल्याण तो क्या अपना भी उद्धार नहीं कर सकता। संन्यास का अधिकारी बालक कदापि भी नहीं है। बालक अर्थात् ''**अज्ञो भवति वै बालः**''।

३. संन्यास कब लेवें, इस विषय में महर्षि लिखते हैं ''**यदहरेव विरजेत् तदहरेव प्रव्रजेद्वनाद्वा गृहाद्वा।**''

जिस दिन दृढ़ वैराग्य प्राप्त होवे उसी दिन, चाहे वानप्रस्थ का समय पुरा भी न हुआ हो अथवा वानप्रस्थ आश्रम का अनुष्ठान न करके गृहाश्रम से ही संन्यास ग्रहण

करे, क्योंकि संन्यास में दृढ़ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान का होना ही मुख्य कारण है। ''**ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत्**'' यदि पूर्ण अखण्डित ब्रह्मचर्य सच्चा वैराग्य और पूर्ण ज्ञान-विज्ञान को प्राप्त होकर विषयासक्ति की इच्छा आत्मा से यथावत् उठ जावे..... वह न गृहाश्रम करे न वानप्रस्थाश्रम, किन्तु ब्रह्मचर्य को पूर्ण कर ही के संन्यासाश्रम को ग्रहण कर लेवें। सं.वि.

महर्षि की इन पंक्तियों से ज्ञात हो रहा है कि संन्यास में मुख्य वैराग्य और यथार्थ ज्ञान का होना है, जब व्यक्ति के अन्दर वैराग्य और यथार्थ ज्ञान हो वही समय संन्यास लेने का है, उस समय व्यक्ति को संन्यास ले लेना चाहिए। कई बार व्यक्ति भावनाओं में बहकर संन्यास ले बैठता है अथवा घोषणा कर बैठता है कि मैं अपनी चल-अचल सम्पत्ति को स्वाहा करके अमुक दिन संन्यास ले लूँगा, किन्तु वर्षों बाद भी व्यक्ति इस काम को नहीं कर पाता। इसमें कारण वैराग्य व यथार्थ ज्ञान का न होना ही है। चल-अचल सम्पत्ति छोड़ने का नाम संन्यास नहीं है। लाल वस्त्र धारण करने का नाम भी संन्यास नहीं है। संन्यास नाम है वैराग्य से युक्त होने का, ज्ञान-विवेक को प्राप्त होने का, परोपकार की भावना से युक्त होकर जन कल्याण करने का। यदि ये सब हैं तो वह काल संन्यास लेने का है।

४. संन्यासी संन्यास लेकर क्या करे? उसका कर्त्तव्य क्या है? इस विषय में महर्षि दयानन्द का मत है ''संन्यास.... परमेश्वर से भिन्न किसी की उपासना न करे, न वेद विरुद्ध कुछ माने, परमेश्वर के स्थान में सूक्ष्म वा स्थूल तथा जड़ और जीव को भी कभी न माने.....जिस-जिस कर्म से गृहस्थों की उन्नति हो वा माता-पिता, पुत्र, स्त्री, पति, बन्धु, बहिन, मित्र, पड़ौसी, नौकर, बड़े और छोटों में विरोध छूट कर प्रेम बड़े, उस-उस का उपदेश करे। जो वेद विरुद्ध मत-मतान्तर के ग्रन्थ बाईबिल, कुरान, पुराण, मिथ्यामिलाप तथा काव्यालङ्कार कि जिनके पढ़ने-सुनने से मनुष्य विषयी और पतित हो जाते हैं, उन सबका निषेध करता रहे। विद्वान् और परमेश्वर से भिन्न न किसी को देव तथा विद्या, योगाभ्यास, सत्संग और सत्यभाषणादि से भिन्न न किसी को तीर्थ और विद्वानों की मूर्तियों से भिन्न पाषाणादि मूर्तियों को न माने-मनवावे।..... किन्तु वैदिक मत की उन्नति और वेद-विरुद्ध पाखण्ड मतों के खण्डन करने में सदा तत्पर रहे।'' सं.वि.

यहाँ महर्षि कह रहे हैं कि संन्यासी वेदविरुद्ध मत, ग्रन्थों बाईबल, कुरान, पुराण आदि का सदैव खण्डन करता रहे। आज हम देखते हैं कई संन्यासी इन्हीं वेदविरुद्ध ग्रन्थों का महिमा मण्डन कर रहे हैं। एक शंकराचार्य ने तो मुस्लिम सभा में जाकर कुरान के एक ही कलमे को वेदों का निचोड़ कह दिया, पूरी कुरान की तो महिमा ही क्या? एक को आर्यों (हिन्दुओं) का अपमान और कुरान, बाईबल की प्रशंसा में आनन्द आता है। एक संन्यासी ने तो अपनी पुस्तक में इन वेदविरुद्ध ग्रन्थों को धार्मिक ग्रन्थों के रूप में प्रकट कर दिया। वैदिक संन्यास ऐसा करने को कदापि नहीं कहता।

जिज्ञासा २- महोदय, मैं आपको तीन जिज्ञासाएँ भेज रहा हूँ। आशा है उचित समाधान प्राप्त होगा।

(क) आर्य समाजों में सत्संग के अन्त में 'जय घोष' के नारे लगाए जाते हैं जैसे- 'आर्य समाज- अमर रहे', 'वेद की ज्योति- जलती रहे', 'वेद का झण्डा- ऊँचा रहे' आदि। आज कल कुछ आर्य समाजी इसको 'आर्य समाज- अमर रहेगा', 'वेद की ज्योति- जलती रहेगी', 'वेद का झण्डा- ऊँचा रहेगा' का उच्चारण करते हैं। आपकी प्रतिक्रिया व निर्देश अपेक्षित है।

(ख) अथ देवयज्ञः, अग्निहोत्रम् में समिदाधान के चार मन्त्रों से तीन समिधा की आहुति दी जाती है। पहली व तीसरी समिधा की आहुति में तो कोई दिक्कत नहीं आती है। दूसरी समिधा को दो मन्त्रों के उच्चारण के पश्चात् आहूत किया जाता है। मैं बचपन से देखते आ रहा हूँ कि कोई न कोई अवश्य गलती करता है। यदि इस दूसरी समिधा को एक ही मन्त्र से ही आहूति देने की व्यवस्था की जाय तो क्या यज्ञ का लाभ कम हो जाएगा। गलती करने से तो अच्छा है कि व्यवस्था में सुधार कर लिया जाय।

(ग) जब यज्ञ किया जाता है तो यज्ञ के ब्रह्मा दक्षिण दिशा में बैठते हैं और मुख उत्तर दिशा की ओर होता है। यदि भवन का निर्माण कुछ इस प्रकार का है कि ब्रह्मा को उत्तर दिशा में बैठ कर दक्षिण की ओर मुख करना पड़े तो यज्ञ की प्रक्रिया पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

रवि आर्य, म.नं. २-बी, सड़क-५१, सेक्टर-८, भिलाई (पश्चिम), छत्तीसगढ़-४९०००९

समाधान- (क) एक पक्ष आर्यसमाज अमर रहे, वेद की ज्योति जलती रहे आदि, दूसरा पक्ष आर्य समाज अमर रहेगा, वेद की ज्योति जलती रहेगी, ओ३म् का झण्डा ऊँचा रहेगा आदि। इन दोनों पक्षों में अन्तर 'रहे' और 'रहेगा' का है। 'रहे' बोलने वाला कामना कर रहा है, कर रहा हो, कर सकता है कि वर्तमान व भविष्य में ओ३म् का झण्डा ऊँचा रहे, वेद की ज्योति जलती रहे। उसकी यह कामना परमेश्वर से हो सकती है और वर्तमान के आर्यवीरों, विद्वानों आदि से भी हो सकती है कि वे ऐसा

कार्य करें, पुरुषार्थ करे, विद्वान् इतना वैदिक प्रचार करें कि वेदमत जगत् भर में फैल जाये, जिससे ओ३म् का झण्डा ऊँचा 'रहे'। परमेश्वर हमें इतनी सामर्थ्य प्रदान करे कि हम अत्यन्त पुरुषार्थी होकर वेदमत माने व मनवावें जिससे ओ३म् का झण्डा सदा ऊँचा 'रहे'। दूसरा 'रहेगा' बोलने वाला भावुकता में दृढ़ता दिखाता हुआ बोल रहा कि ऊँचा 'रहेगा'। सिद्धान्त: दोनों को बोलने में कोई हानि नहीं है।

मनुष्य स्वतन्त्र चेतन प्राणी है वह फेर बदल कर सकता है, किन्तु इस स्वतन्त्रता से मनमानी न होने लग जाये इसके लिए किसी एक नियम में बन्धना चाहिए, बन्धना होता है। यहाँ भी इस 'रहे' व 'रहेगा' में एकरूपता के लिए एक ही होवे तो अधिक उचित है। इन दोनों में से जो परम्परा से चला आ रहा 'रहे' है वही ठीक है। अन्यथा कुछ भी विकृति आने लगती है। जैसे- एक नारा बोलते हैं 'गो माता की जय हो' यह नारा अपनी जगह ठीक है क्योंकि इस 'जय' में गाय के लिए जो उचित है वह सब आ गया। किन्तु इसको बदलते-बदलते बोलने लग गये 'गो माता का पालन हो, पालन करो, रक्षा हो' आदि। अब इसको यदि ऐसे ही बदलते रहे तो धीरे-धीरे 'गो माता को चारा डालो, पानी पिलाओ, इनके लिए भवन बनवाओ' आदि नारे भी बोलने लग जायेंगे। इसलिए एकरूपता के लिए 'जय हो, अमर रहे, जलती रहे, ऊँचा रहे' आदि उचित है।

(ख) अग्निहोत्र में समिधादान मन्त्र ४ हैं और समिधाएँ ३ हैं। बीच के दो मन्त्रों से दूसरी समिधा दी जाती है। इस दूसरी समिधा की आहुति देते समय प्राय: गलती करते हैं, क्योंकि दूसरे मन्त्र को बोल तीसरे मन्त्र की समाप्ति पर समिधादान करना होता है, किन्तु यजमान दूसरे मन्त्र पर ही समिधा आहूत कर देता है, यह समस्या है। इस समस्या से बचने के लिए आपका कथन है कि इस दूसरी समिधा को एक ही मन्त्र से आहूत कर व्यवस्था में सुधार कर लिया जाये जिससे गलती न हो। इसके लिए हमारा कथन है कि व्यवस्था परिवर्तन किया जा सकता है, कर सकते हैं और इस व्यवस्था परिवर्तन से यज्ञ के लाभ में भी कोई अन्तर नहीं आयेगा, यज्ञ का लाभ यथावत रहेगा। किन्तु इस एक दिक्कत (समस्या) से बचने के लिए व्यवस्था परिवर्तन करने से अनेक व्यवस्थाएँ परिवर्तन करने पड़ सकते हैं। जैसे इस समिधादान करने में त्रुटि कर रहे हैं वैसे आचमन, अङ्गस्पर्श, जल सेचनादि में भी त्रुटि करते हैं। बहुत से लोग आचमन को ही ठीक से विधिवत् नहीं कर पाते। अङ्गस्पर्श करते हुए पहले दाहिने ओर फिर बांई ओर का अङ्गस्पर्श करना होता है, इसमें भी प्राय: लोग उल्टा करते हैं। ऐसे ही जल सेचन करते हुए त्रुटियाँ होती हैं। इसलिए ऐसा न हो कि जहाँ हमें समस्या दिखे वहाँ व्यवस्था परिवर्तन कर लेवें। यथार्थ में तो कोई दिक्कत है ही नहीं। दिक्कत है तो यह कि हमने यज्ञ की प्रक्रिया को ठीक से समझा व अन्यों को समझाया नहीं। यदि हम यज्ञ पद्धति को ठीक से समझ व समझा देवें तो कोई दिक्कत नहीं आयेगी।

रही व्यवस्था सुधार (परिवर्तन) की बात तो इस लम्बे काल व व्यापक रूप से चली आ रही व्यवस्था का परिवर्तन करना इतना सरल नहीं है जितना हम सोचते हैं। हाँ हम अपना सुधार (परिवर्तन) कर सकते कि जब हम कहीं यज्ञ करवाते हैं वा कोई आचार्य, पुरोहित करवाता है तो यजमान को ध्यान दिलाते हुए उससे ठीक-ठीक क्रिया करवावें। यदि त्रुटि करता है तो उसको पुन: सरलता से बताते हुए ठीक क्रिया करवावें, यही सुधार उचित है।

(ग) यज्ञ में ब्रह्मा का स्थान दक्षिण दिशा में होता है, यह सामान्य नियम है। यदि स्थान अनुकूल है तो दक्षिण दिशा में ही ब्रह्मा का आसन होना चाहिए। किन्तु यदि स्थान की अनुकूलता नहीं है तो जैसी अच्छी व्यवस्था बने वैसा कर लेवें, इससे यज्ञ प्रक्रिया में कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा, जहाँ सामान्य नियम और अपवाद हो वहाँ अपवाद काम करता है, उससे अपना कार्य सिद्ध कर लेना चाहिए।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

संस्था - समाचार

१ से १५ जनवरी २०१४

१. ओडिशा में तूफान आपदा राहत कार्य- महर्षि स्वामी दयानन्द जी द्वारा संस्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी 'परोपकारिणी सभा' महर्षि द्वारा बताए गए लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कृत संकल्प है। महर्षि जी ने सभा के तीसरे लक्ष्य के रूप में स्पष्ट निर्देश दिया है कि- 'आर्यावर्त्तीय व दीन मनुष्यों का संरक्षण व पोषण किया जाए'। अत: सभा अपने सामर्थ्यानुसार इन कार्यों को करती रहती है। उत्तराखण्ड बाढ़ आपदा राहत कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के पश्चात् जब पिछले दिनों ओडिशा आदि प्रान्तों में 'पाइलीन' तूफान के कारण जो जन-धन की हानि हुई तो सभा ने यहाँ भी राहत कार्य करने का निश्चत किया। आप सभी उदारमना दानदाताओं से प्राप्त धनराशि से ओडिशा में गंजाम आदि प्रभावित जिलों के बमकई, कल्याणपुर, सुमन्तपुर, डुमबल, मागुरपुड़ा आदि स्थानों में धनहानि प्राप्त लोगों को चावल (२५ किलो), दाल (२ किलो), चीनी, तेल, सर्फ, साबुन आदि के लगभग ११००/- रुपए के लागत के पैकेट बनाकर लगभग २५ परिवारों में वितरित किए गए। ऐसे दो परिवार जिनके मकान तूफान में उड़ चुके थे, को २५,०००/- रुपए की नगद सहायता गृह-निर्माण हेतु की गई। यह राहत कार्य आचार्य सत्यप्रिय जी के नेतृत्व में ब्र. दुष्यन्त जी, भीम जी पात्र व स्थानीय लोगों के मार्गदर्शन में किया गया।

२. डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम- सम्पन्न कार्यक्रम-(क) २ से ५ जनवरी २०१४- बिलासपुर (छ.ग.) में सुधीश जी आर्य की पुत्री का विवाह-संस्कार सम्पन्न करवाया।

(ख) ७ से ९ जनवरी २०१४- दार्जिलिंग (पश्चिम बंगाल) में महर्षि दयानन्द जी के समय में संस्थापित ऐतिहासिक आर्यसमाज की गतिविधियाँ जानी व यहाँ लोगों से सम्पर्क किया। यह समाज पूर्व समय में प्रचुर मात्रा में नेपाली भाषा में वैदिक साहित्य प्रकाशित करता रहा है। अपने इस प्रवास में डॉक्टर साहब को स्थानीय आर्य नेता भीम क्षेत्री जी का भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ।

(ग) १० से १२ जनवरी २०१४- आर्यसमाज सिलीगुड़ी के उत्सव में उद्बोधन प्रदान किया। इस अवसर पर यहाँ एक 'बच्चों के निर्माण में अभिभावकों की भूमिका' विषयक संगोष्ठी भी आयोजित की गई।

(घ) १३-१४ जनवरी २०१४- सभा प्रधान श्री गजानन्द जी आर्य के निवास में आपकी धर्मपत्नी (माता) तारामणी जी के ८०वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में यज्ञ सम्पन्न करवाया तथा अपनी शुभकामनाएँ व उद्बोधन प्रदान किया।

३. आचार्य कर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम- आर्यसमाज परतवाड़ा, अमरावती (महा.) के पंकज जी, मोहन राव जी गेचरे, सुधीर जी, तुलसी जी, रामेश्वर शास्त्री जी आदि युवा कार्यकर्त्ताओं का समूह, अपने क्षेत्र में पूरे उत्साह से वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। विगत ११ व १२ जनवरी को इन्होंने अपने यहाँ दो दिवसीय आवासीय छात्र चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया, जिसमें लगभग ४०-४५ बच्चों ने भाग लिया। इस शिविर में महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान के अध्यापक आचार्य कर्मवीर जी के सान्निध्य में छात्रों को आसन, प्राणायाम, यज्ञ, वैदिक ध्यान का प्रायोगिक प्रशिक्षण प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त चरित्र निर्माण, राष्ट्र-निर्माण आदि विषयों पर व्याख्यान आदि के माध्यम से भी इनका मार्गदर्शन किया गया।

अपने इस महाराष्ट्र प्रवास के दौरान आचार्य जी ने यज्ञ आदि के माध्यम से जनसम्पर्क का कार्य भी किया। इसके अन्तर्गत १३ जनवरी को प्रात: तुलसी जी के यहाँ उनकी पुत्री का नामकरण संस्कार, सायं काल में सिन्धीकैंप में विजय जी के यहाँ पारिवारिक यज्ञ, १४ जनवरी को प्रात: निकटवर्ती सालेपुर में आर्यवीर तुषार जी के यहाँ उनके जन्मदिवस के उपलक्ष्य में यज्ञ व प्रवचन, सायं काल में श्री रामेश्वर शास्त्री जी के यहाँ पारिवारिक यज्ञ, १५ जनवरी को प्रात: तलेगाँव-मोरवा में यज्ञ, सायंकाल इन आर्य-युवकों से 'आर्य-अनाथालय' के निर्माण के सम्बन्ध में विचार-विमर्श आदि प्रमुख कार्यक्रम रहें।

४. आचार्य सत्यप्रिय जी का प्रचार कार्यक्रम- अपने बाढ़ राहत कार्यक्रम के अतिरिक्त आचार्य सत्यप्रिय जी ने ओडिशा प्रवास के दौरान अनेक स्थानों पर योग शिविर, यज्ञ, उद्बोधन व जनसम्पर्क कर वैदिक धर्म का प्रचार किया। इस प्रचार कार्यक्रम की रूपरेखा सभा के कर्मठ कार्यकर्त्ता वानप्रस्थी वेदमुनि जी के सहयोग से तैयार की गई। आप विगत दो वर्षों से लगातार लगभग एक माह का प्रचार कार्यक्रम अपने क्षेत्र में करवा रहे हैं। वर्ष २०१३ का आचार्य सत्यप्रिय जी के सान्निध्य में प्रचार कार्यक्रम इस प्रकार रहा- १२ से १७ दिसम्बर २०१३ तक सालेपाली, जि. बलांगिर स्थित एक विद्यालय में योग शिविर आयोजित किया गया। इस दौरान रात्रि में किसी न किसी निकटवर्ती ग्राम में सभाएँ कर प्रवचन आदि के माध्यम से वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार कार्य निरन्तर चलता रहा। १५ दिसम्बर को आयुध निर्माणी बलांगिर के कैम्पस में

उपस्थित जनसमूह को यज्ञ, संध्या, वेद आदि शास्त्रों के सम्बन्ध में व्याख्यान प्रदान किया गया। २० दिसम्बर को पद्मपुर में पारिवारिक यज्ञ। २१ से २२ दिसम्बर को पद्मपुर स्थित नवप्रभात आश्रम में छात्रों को मार्गदर्शन प्रदान किया। पुन: गुरुकुल आश्रम आमसेना व गुरुकुल हरिपुर आदि संस्थाओं में आचार्यों, अधिकारियों से भेंट कर ब्रह्मचारियों को मार्गदर्शन प्रदान किया। इस प्रकार बाढ़ राहत व प्रचार कार्यक्रम समाप्त कर आप २८ दिसम्बर २०१३ को ओडिशा से चलकर छिन्दवाड़ा (म.प्र.) आदि में जनसम्पर्क करते हुए अजमेर पहुँचे।

५. यज्ञ एवं प्रवचन- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान, आर्यजगत् के उन स्थानों में से एक है, जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय भी किया जाता है। प्रात: प्रवचन के क्रम में आचार्य सत्येन्द्र जी मनुस्मृति पर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं तो सायंकाल सत्यार्थप्रकाश व व्यवहारभानु आदि ग्रन्थों का स्वाध्याय कराया जाता है।

प्रात: कालीन सत्र में आचार्य सत्येन्द्र जी ने मनुस्मृति की व्याख्या करते हुए बताया कि कुछ विद्वान् 'मनुस्मृति' को धर्मशास्त्र भी कहते हैं, क्योंकि इसमें मानव धर्म का विधान किया गया है। पुन: प्रश्न उपस्थित होता है कि धर्म क्या है? इसका समाधान करते हुए आपने बताया कि 'धारणाद् धर्म:' जो धारण किया जाता है, वही धर्म है जैसे अग्नि, ऊष्णता को धारण करती है, तो उष्णता अग्नि का एक धर्म है। शीतलता, जल का धर्म है, उसी प्रकार मनुष्यों का भी धर्म होता है, लेकिन यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि जैसे अग्नि सदैव ऊष्णता ही धारण करती है, कभी भी अपने स्वभाव/धर्म के विपरीत गुण धारण नहीं करती, इसके विपरीत मनुष्यों को धर्म-धारण करने में स्वतन्त्रता प्रदान की गई है। वह चाहे तो धर्म धारण कर सकता है और चाहे तो अधर्म धारण कर सकता है। जो-जो मनुष्य धर्म को धारण करता है वह इस लोक में कीर्ति और मर कर सर्वोत्तम सुख प्राप्त करता है। इसके विपरीत अधर्म का आचरण करने वाले का जीवन इस लोक में क्लेश, तनाव, दु:ख युक्त तो होता ही है, परलोक भी अत्यन्त दु:ख युक्त होता है।

५ व १२ जनवरी के अपने रविवासरीय प्रवचन में डॉ. रमेश मुनि जी ने 'त्र्यम्बकं यजामहे' इस प्रसिद्ध वेदमन्त्र की व्याख्या यज्ञप्रेमी जनों के सम्मुख प्रस्तुत की। अपने इन व्याख्यानों में खरबूजे के विभिन्न गुणों को लेकर, उससे हमें क्या शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, इसे निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझाया-

(क) जैसे खरबूजा पकने पर स्वत: ही अपनी बेल से अलग हो जाता है, उसी प्रकार हमें भी ज्ञानात्मक दृष्टि से पक कर संसार रूपी बेल से अलग हो जाना चाहिए।

(ख) जैसे खरबूजा पकने पर सुगन्ध देता है और लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है, उसी प्रकार हमें भी अपने में उन-उन गुणों का विकास करना चाहिए जिनकी सुगन्धि से अन्य लोग हमारे साथ जुड़ते चले जाए।

(ग) खरबूजे के पूर्णत: पकने पर उसके बीज, आन्तरिक सतह से पूर्णत: अलग हो जाते हैं, कई बार तो सतह में इसके निशान तक नहीं दिखाई देते, ठीक उसी प्रकार हमें अपने अज्ञान व कुसंस्कार रूपी बीजों को अपने से अलग करना है।

(घ) एक खरबूजा, समीपवर्ती खरबूजे के पकने पर स्वयं भी पकना प्रारम्भ कर देता है, अत: लोक में उक्ति भी प्रचलित है कि 'खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है' इसी प्रकार हमें भी दूसरे व्यक्तियों के सुख-दु:ख में सुखी-दु:खी होना चाहिए।

अपने सायंकालीन प्रवचन क्रम में आचार्य कर्मवीर जी ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास का स्वाध्याय कराते हुए बताया कि वस्तुत: विद्या ही व्यक्ति का परम आभूषण है क्योंकि भौतिक आभूषण धारण करने से व्यक्ति की आत्मा कभी भी सुशोभित नहीं होती, बल्कि उल्टे इनके धारण करने से देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तो होता ही है। इसके विपरीत विद्या से जीवन धन्य होता है अत: धार्मिक माता-पिता को चाहिए कि अपनी सन्तति के लिए उत्तम शिक्षा और विद्या का ही उपदेश करें। महर्षि दयानन्द जी ने बालक तथा बालिकाओं के लिए पृथक्-पृथक् विद्यालय होने का निर्देश किया है, इस विधान की गम्भीरता बताते हुए आपने स्पष्ट किया कि विद्यार्थीकाल में आलम्बनों को दूर रखकर ही जीवन की सुदृढ़ नीव का निर्माण किया जा सकता है, अन्यथा वर्तमान समाज की स्थिति सभी के सामने है, जहाँ कुछ बच्चों को छोड़कर प्राय: अधिकतर छात्रों का नैतिक पतन होता ही है। माता-पिता को चाहिए कि पहले स्वयं घर में सन्तानों को उत्तम शिक्षा का उपदेश करें, पुन: योग्य अध्यापकों के सान्निध्य में विद्या-अध्ययन के लिए छोड़े। आपने गुरुकुलीय पद्धति की महत्ता बताते हुए स्पष्ट किया कि प्राचीन गुरुकुलों में चाहे राजा का पुत्र हो या किसी गरीब व्यक्ति का, सबको समान भोजन, वस्त्र, आसन आदि प्रदान किए जाते थे। सभी को एक कठोर दिनचर्या में चलाकर तप कराया जाता था, क्योंकि जिस प्रकार अग्नि में तपने पर ही सोना, कुन्दन बनता है, उसी प्रकार जीवन भी ब्रह्मचर्य रूपी अग्नि में तपकर ही श्रेष्ठ बनता है।

आचार्य कर्मवीर व दीपक आर्य

आर्यजगत् के समाचार

१. आचार्य की आवश्यकता- गुरुकुलीय शिक्षा हेतु निम्न आचार्य की आवश्यकता है-

(क) मुख्य आचार्य, योग्यता- किसी भी विषय में आचार्य उपाधि तथा महर्षि दयानन्द द्वारा निर्धारित शिक्षा पद्धति की योग्यता व पाठन की क्षमता। अनुशासन प्रिय व समर्पित। आयु-३० से ५० वर्ष तक। मानदेय- योग्यतानुसार, भोजन व आवास नि:शुल्क।

(ख) आधुनिक विषय आचार्य, योग्यता- आचार्य एवं आधुनिक विषय हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी में विशेष योग्यता व पाठन की क्षमता तथा कम्प्यूटर व योग का ज्ञान। आयु- २५ से ४० वर्ष तक। मानदेय- योग्यतानुसार, भोजन व आवास नि:शुल्क।

प्रार्थना पत्र के साथ योग्यता, अनुभव के पूर्ण विवरण की फोटो कॉपी संलग्न कर एक माह के अन्दर निम्न पते पर भेजने का कष्ट करें-

मन्त्री, आर्यसमाज अनाथालय, ६८, सिविल लाइन्स, बरेली-२४३००१ (उ.प्र.) दूरभाष- ०५८१-२४७२८६९

२. संगोष्ठी का आयोजन- आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के सौजन्य से वैदिक मिशन मुम्बई की ओर से दि. २२-२३ मार्च २०१४ को स्वामी प्रणवानन्दजी सरस्वती, दिल्ली की अध्यक्षता में आर्य समाज सान्ताक्रुज, मुम्बई में ऋषि दयानन्द और उनकी बृहत्त्रयी के विषय में संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें स्वामी आर्यवेश जी दिल्ली, स्वामी धर्मानन्द जी ओड़िशा, स्वामी विवेकानन्द जी मेरठ, विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित रहेंगे। इस संगोष्ठी में भारत के लगभग ५० संन्यासी, महात्मा एवं वैदिक विद्वान् भाग ले रहे हैं। जो ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व और उनके द्वारा रचित ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका एवं संस्कारविधि में वर्णित विषयों की महत्ता, उपयोगिता और इनके प्रचार-प्रसार के विविध उपायों के विषय में गहन चिन्तन करेंगे। चलभाष-०९८६९६६८१३०

३. राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिनिधित्व- मानव संसाधन विकास मन्त्रालय (भारत सरकार) द्वारा संचालित राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (दिल्ली) द्वारा आयोजित उत्तराखण्ड राज्यस्तरीय शास्त्रीय प्रतिस्पर्धा का आयोजन दिनांक २-३ जनवरी २०१४ को आदर्श महाविद्यालय, हरिद्वार में किया गया। इस प्रतिस्पर्धा में संस्कृत जगत् के अनेक विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा गुरुकुलों के छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। इस प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल पौन्धा के आठ छात्रों ने गुरुकुल का प्रतिनिधित्व किया।

संस्कृत व्याकरण भाषण प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल के छात्र ब्र. शिवकुमार आर्य ने प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा साथ ही श्लोक निर्माण समस्यापूर्ति में भी प्रथम स्थान प्राप्त किया। ब्र. कैलाश आर्य ने सम्पूर्ण अमरकोष कण्ठाग्र करके प्रतिस्पर्धा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। ब्र. ओमप्रकाश आर्य ने रघुवंश के ५ सर्ग स्मरण कर प्रतिस्पर्धा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। ब्र. सत्यकाम आर्य ने परिभाषेन्दुशेखर शलाका परीक्षा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। सम्पूर्ण पाणिनीय धातुरूप स्मरण कर ब्र. यशदेव आर्य द्वितीय स्थान पर रहे और साथ ही यह छात्र श्लोक निर्माण समस्यापूर्ति में भी तृतीय स्थान पर रहा। ब्र. गौरव आर्य ने श्लोक अन्ताक्षरी प्रतिस्पर्धा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इसी प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल के ब्र. सत्यकाम आर्य ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इस प्रतिस्पर्धा में प्रथम आने वाले छात्र उत्तराखण्ड राज्य का प्रतिनिधित्व करते हुए भोपाल में आयोजित राष्ट्रिय प्रतिस्पर्धा में भाग लेंगे। इस प्रतिस्पर्धा में प्रत्येक राज्य से प्रथम स्थान प्राप्त विजयी प्रतिभागी ही भाग ले सकते हैं।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज अन्धेरी (प.) मुम्बई का २७वाँ वार्षिकोत्सव २६ से २९ दिसम्बर २०१३ तक हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ २१ कुण्डीय चतुर्वेद शतक यज्ञ से हुआ, जिसके ब्रह्मा आचार्य शिवदत्त जी थे, वेदपाठ गुरुकुल चोटीपुरा की ब्रह्मचारिणियों के द्वारा किया गया। निरन्तर चारों दिन जीवनोपयोगी उपदेश की अमृत वर्षा का लाभ जन साधारण ने प्राप्त किया। २१ कुण्डों पर आहुतियाँ देने के लिये हजारों लोगों ने निरन्तर यजमान बनकर पुण्य लाभ प्राप्त किया। यज्ञ की शोभा दर्शनीय थी। जन साधारण का उत्साह देखने योग्य था। श्री कैलाश कर्मठ, कोलकाता ने भजन प्रस्तुत किए।

५. स्नेह मिलन- गुजरात में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा हर सम्भव प्रयास किये जा रहे हैं। तदन्तगर्त गुजरात के विभिन्न शहरों-गाँवों में बसे आर्य परिवारों के आपसी परिचय व स्नेह-सौहार्द की वृद्धि हेतु आर्य परिवार स्नेह मिलन-२०१३ का आयोजन किया गया। दिनांक २७ से २९ दिसम्बर तक चले इस मिलन में आबालवृद्ध पुरुषों व महिलाओं ने उत्साह से भाग लिया। ५०० से भी अधिक नर-नारी ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। वानप्रस्थ आश्रम, रोजड़ के प्राकृतिक, पवित्र व आध्यात्मिक वातावरण में आयोजित इस स्नेह मिलन में अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुए। जिनमें आर्यसमाज के सदस्यों की सन्तानों का शैक्षणिक सिद्धि सम्मान, प्रश्नमंच, आर्यसमाज व वैदिक धर्म प्रचार में

विशेष योगदान देने वाले आर्यों का विशिष्ठ सम्मान, अपने वैवाहिक जीवन के २५ वर्ष पूर्ण करने वाले आर्य दम्पत्तियों का सम्मान आदि शामिल हैं।

प्रतिदिन प्रात:कालीन योग-ध्यान-उपासना, यज्ञ से दिनचर्या आरम्भ होती थी, जो अनुशासित ढंग से रात्रि ९.३० तक चलती थी। इस दौरान आचार्य ज्ञानेश्वर जी, आचार्य सत्यजित् जी, आचार्य सोमदेव जी, स्वामी सत्यपति जी, स्वामी मुक्तानन्द जी आदि विद्वानों का सान्निध्य व उपदेशों का लाभ प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण कार्यक्रम का संयोजन व संचालन सभा मन्त्री हंसमुख परमार ने किया। सभा प्रधान सुरेशचन्द्र अग्रवाल ने विशेष मार्ग दर्शन देकर कार्यक्रम को सफल बनाया।

६. बलिदान दिवस मनाया- आर्यसमाज मन्दिर महर्षि पाणिनि नगर पूँजला, जोधपुर, राजस्थान में २३ से ३० दिसम्बर २०१३ तक अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये गये। २३ दिसम्बर को मध्याह्न ३.३० बजे यज्ञ के ब्रह्मा श्री शिवराम शास्त्री द्वारा यज्ञ, श्री गणपतसिंह आर्य, श्री मदन तँवर, श्री चेनसिंह परमार व गुलाब आर्य ने भजन प्रस्तुत किये।

२४ से ३० दिसम्बर २०१३ तक सात दिवसीय आर्य वीर व वीरांगना दल का शिविर आयोजित किया गया, **जिसमें पाकिस्तान से पधारे हिन्दू शरणार्थियों के ३५ बच्चे व बच्चियों ने भाग लिया।** २५ से ३० दिसम्बर २०१३ तक छ: दिवसिय ध्यान योग व एक्युप्रेशर शिविर नि:शुल्क आयोजित किया गया। जिसमें १९७ मरीजों की जाँच की गई। २८ दिसम्बर को प्रो. राजेन्द्र विद्यालंकार (कुरुक्षेत्र) आध्यात्मिक विषय पर अपने विचार व्यक्त किये, साथ ही भजनोपदेशक पं. भीष्म (बिजनौर) ने ऋषि के भजन प्रस्तुत किये। अन्त में धन्यवाद श्री मदन तँवर द्वारा व मंच संचालन श्री शिवराम शास्त्री द्वारा किया गया।

७. शिविर सम्पन्न- आर्यवीर दल राजस्थान व आर्यसमाज बालोतरा के संयुक्त तत्त्वावधान में राजस्थान का प्रान्तीय आवासीय योग-व्यायाम प्रशिक्षण व चरित्र निर्माण शिविर २४ से ३१ दिसम्बर २०१३ को बालोतरा में आयोजित किया गया। शिविर में आर्य वीरों को जूड़ो-कराटे, योगासन, प्राणायाम, लाठी भाला, तलवार, आत्मरक्षा, सूर्य नमस्कार, भूमि नमस्कार, दण्ड-बैठक, मल्लखम्भ, रस्सा मल्लखम्भ व बौद्धिक प्रशिक्षण व संगीत में देश भक्ति गीतों का प्रशिक्षण दिया गया।

शिविर में आर्य वीरों को बौद्धिक प्रशिक्षण श्री सत्यवीर आर्य (प्रान्तीय संचालक), श्री भवदेव शास्त्री (प्रान्तीय मन्त्री), श्री यतीन्द्र शास्त्री (सम्भाग संचालक, अजमेर) इन सभी विद्वानों द्वारा प्रशिक्षण दिया गया।

८. आगमन- २८ नवम्बर २०१३ को वेद के अनुशीलन में अनुरक्त हॉलैण्ड से बहिन इन्दु आर्या, कन्या गुरुकुल शिवगंज में पधारी तथा २ दिसम्बर तक गुरुकुल में रही।

अथर्ववेद भाष्यकार एवं गोपथ ब्राह्मण भाष्यकार पं. क्षेमकरण त्रिवेदी से सभी सुपरिचित हैं। उनकी पौत्रवधू माता सुशीला जौहरी थीं जिनकी पुत्री श्रीमती इन्दु आर्या हैं।

वेदों में कई एक स्थल गम्भीर हैं, ज्ञातव्य है बहिन इन्दु को कहीं से यह ज्ञात हुआ कि इसकी समुचित जानकारी आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज से हो सकती है। एतदर्थ वे अपने पतिदेव श्री ओंकारनाथ के साथ गुरुकुल में पधारी। उनके आर्य कन्या गुरुकुल में आने पर आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा एवं आचार्या धारणा याज्ञिकी ने उनके वेद के ज्ञातव्य विषयों को भलीभाँति अवगत करा दिया। बहुत अच्छी बात है कि वेद की जिज्ञासु वेद जानने के लिए प्रयत्नशील हैं।

चुनाव

आर्य प्रतिनिधि सभा, हिमाचल प्रदेश

प्रधान- श्री प्रबोधचन्द्र सूद, **मन्त्री** - श्री रामफल सिंह आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री नरेश काम्बोज।

ई-मेल द्वारा परोपकारी नि:शुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही नि:शुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अत: पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह नि:शुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल-psabhaa@gmail.com **-व्यवस्थापक**

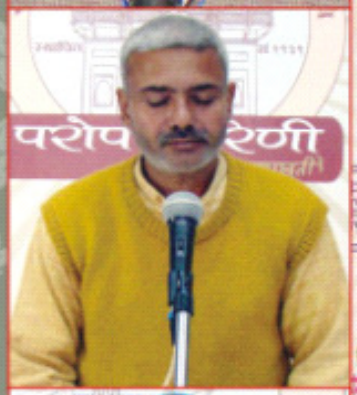

अध्यापक-गण

उच्च प्रथम श्रेणी व प्रथम श्रेणी प्राप्त शिविरार्थीगण।

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक प्रेषण : ३० जनवरी , २०१४ RNI. NO. ३९५९/५९

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर (२४ नवम्बर से १ दिसम्बर २०१३)

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर

(राजस्थान) - ३०५००१

डाक टिकिट